चन्दामामा
माँ - बच्चों का मासिक पत्र

Photo by E. Ramalingam

पुरस्कृत परिचयोक्ति

'किधर से आती, रेल बता दो ?'

प्रेषक : श्री रामजी तिवारी, कलकत्ता

चन्दामामा

जुलाई १९५७

विषय - सूची

विषैले पदार्थों से बचानेवाला मलहम,

क्लोरोफ़िलवाला जेमैक्स

जो घाव, एग्ज़िमा, खुजली, दाद, काट, फ़ुँसियां और ऐसे सभी चर्म रोगों के लिए आराम पहुँचाता है।

RAJ BHAVAN.

संदेश

मुझे यह जानकर बड़ा ही आनंद हुआ कि "चंदामामा" पत्रिका नियमित रूप से दस भाषाओं में प्रकाशित होती है और इसकी ढाई लाख प्रतियां प्रति मास वितरित होती हैं। इसका हिन्दी और अंग्रेजी संस्करणों को मुझे भी देखने का सुअवसर मिलता है।

मैं "चंदामामा" के संपादकों, व्यवस्थापकों और संचालकों को हृदय से बधाई और धन्यवाद देता हूं कि वे इतनी उपयोगी पत्रिका प्रकाशित कर रहे हैं और देश की विविध भाषाओं में उसे छाप कर सभी बालक बालिकाओं को इससे लाभ उठाने का अवसर दे रहे हैं।

पत्रिका बड़ी ही सुन्दर ढंग से छपती है और तुरंत ही हृदय को आकर्षित करती है। मेरी शुभ कामना है कि इसकी दिन प्रतिदिन उन्नति हो और अधिकाधिक बालक बालिकाएं इससे लाभ उठावें और इससे अच्छी शिक्षा-दीक्षा ग्रहण कर आगे चलकर देश के उपयोगी नागरिक बनें।

[श्री प्रकाश]
(राज्यपाल)

राजभवन, पूना-७
२० मई, १९५७

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

आज से दस वर्ष पूर्व तेलुगु "चन्दामामा" का उदय हुआ। तब से प्रति मास, "चन्दामामा" शीतल, मधुर, प्रकाश देता आ रहा है। बड़ी कठिनाइयाँ आईं, प्रकाशन में बाधाएँ हुईं, पर यह कभी राहुग्रस्त न हुआ।

तेलुगु की तरह इस अंक के साथ, तमिल "चन्दामामा" भी, अपना दसवाँ वर्ष पूरा कर रहा है।

इन दस वर्षों में "चन्दामामा" का परिवार काफी बढ़ गया है। अब यह १० भाषाओं में प्रकाशित हो रहा है। इसकी लाखों प्रतियाँ करोड़ों पाठकों द्वारा पढ़ी जाती हैं।

हिन्दी "चन्दामामा", जिसका प्रचलन-क्षेत्र सबसे अधिक विस्तृत है, आज आठ वर्ष का है। "चन्दामामा" का उद्देश्य प्रारंभ से यह रहा है कि मनोरंजक सामग्री के साथ, शिक्षाप्रद सामग्री भी रोचक शैली में दी जाय।

यह "चन्दामामा" की वर्षगाँठ है। हम इस मौके पर उन सब के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं, जिन्होंने हमें प्रोत्साहन दिया। धन्यवाद।

अंक : ११

जुलाई १९५७

वर्ष : ८

मुख - चित्र

पाण्डव और द्रौपदी ने विराट राजा के यहाँ अपने अज्ञातवास के दस महीने बिताये। अभी इस अज्ञातवास के दो महीने और बाकी थे। इस बीच, सुधेष्णा के भाई, कीचक ने द्रौपदी को देखा।

वह विराट राजा का सेनापति था। वह बड़ा शक्तिशाली और घमंड़ी था। द्रौपदी को देखते ही वह उस पर मोहित हो गया। वह निर्भय हो अन्तःपुर में घुस गया। द्रौपदी के पास जाकर उसने पूछा—"तुम कौन हो? तुम जैसी सुन्दरी मैंने कहीं नहीं देखी है! तुम्हें यहाँ पर नौकरानी का काम करने की क्यों नौबत आई है? मुझ से शादी कर मेरी रानी बनकर रहो। मेरी और पत्नियाँ तुम्हारी दासी होकर रहेंगी और मैं तुम्हारा दास बनूँगा।"

"मैं पर-स्त्री हूँ। मुझ से तुझे क्या काम? तू अपना इरादा बदल ले, नहीं तो मेरे पति, पाँच गन्धर्व तुझे मार डालेंगे।" द्रौपदी ने कीचक को डराया।

कीचक न डरा। उसने कहा—"इन तीनों लोको में कोई नहीं है, जो मुझे मार सके। यह विराट राजा आज सिंहासन पर है तो मेरे पराक्रम के कारण ही। इसलिये, तू मेरी बात मान जा और मुझ से शादी कर ले।"

"पापी! लगता है, तेरी आयु समाप्त हो गई है। अगर मेरे पतियों को मालूम हो गया कि तेरे मन में यह इच्छा है तो वे तुझे मार देंगे। तेरा बल-पराक्रम, उनके सामने काम नहीं आयेगा।" द्रौपदी ने कहा।

द्रौपदी को वह न मना सका। उसने अपनी बहिन सुधेष्णा के पैरों पर पड़कर कहा—"बहिन! अगर इस सैरन्ध्री ने मुझसे विवाह न किया तो मैं जीता न रह सकूँगा। जैसे तैसे यह देखो कि वह मुझसे शादी कर ले।"

सुधेष्णा ने उसे समझाया-बुझाया, पर कीचक न माना। आख़िर उसने उससे कहा—"तू घर जाकर मद्य, और मधुरान्न तैयार करा। मैं उनके लिए सैरन्ध्री को भेजूँगी। हो सके तो उसे तू मना लेना। शायद वह मान जाय।"

कीचक खुशी खुशी अपने घर चला गया।

उन दिनों काशी राज्य का राजा ब्रह्मदत्त था। राजगृह में एक बनिये के एक लड़का था। उसका विवाह तो हो गया था, पर उसके कोई सन्तान न थी।

उसकी पत्नी को, क्योंकि वह निस्सन्तान थी, उसकी सास नीची नज़र से देखने लगी। एक दिन उसने अपनी सास को अपने आप यों बातें करता सुना— "शायद इसके भाग्य में बच्चे ही नहीं लिखे हैं। संसार के लिए यह निरी-बोझ है।" अपनी मान-मर्यादा को बचाने के लिए उसने अपनी सास से झूटमूट कह दिया कि वह गर्भवती थी।

फिर उसने अपनी सेविका से जान लिया कि गर्भवती स्त्रियाँ प्रायः क्या क्या चाहती हैं। वह भी गर्भवती स्त्रियों की तरह खट्टी खट्टी चीज़, बढ़िया बढ़िया पकवान माँगने लगी। इस के साथ साथ पेट पर कपड़े-लत्ते आदि, बाँधकर उसने यह दिखाने का प्रयत्न किया कि उसका गर्भ बढ़ रहा था।

यह देख उसकी सास ने समझा कि सचमुच बहू को गर्भ हुआ है। उसे बहुत प्रसन्नता हुई और तब से उसकी बहुत प्यार-परवाह करके देख-भाल करने लगी।

कुछ महीनों बाद उसने अपने पति से कहा—"प्रसव के लिए मुझे मायके भेज दीजिये।" उसके पति ने अपनी पत्नी के इच्छानुसार उसके जाने के लिए गाड़ी का प्रबन्ध कर दिया और उसके साथ अनेक नौकर-चाकर भेजे।

वह अपने मायके जाते जाते, एक दिन सवेरे नित्य-कृत्यों से निवृत्त होने के लिए, मार्ग के समीप ही, पेड़ों के झुरमुट में

गई। वहाँ एक पेड़ के नीचे उसे एक छोटा-सा बच्चा दिखाई दिया।

कुछ समय पहिले, उस रास्ते एक काफ़िला गया था। उस काफ़िले में एक गरीब स्त्री थी। उसने पेड़ के नीचे एक बच्चे को जन्म दिया। क्योंकि उसका वह पालन-पोषण न कर पाती थी, इसलिये उस बच्चे को वहाँ छोड़कर, वह आगे चली गई। यह बच्चा ही बोधिसत्व था।

उस गोरे, चमचमाते बच्चे को देखकर, वैश्य स्त्री फूली न समाई। उसने फौरन अपनी सेविका को अपने पास बुलाया और बच्चे को दिखा कर कहा—"मैं सब लोगों से यह कहूँगी कि यह लड़का मेरा है! तू भी सब से यही कहना कि तूने ही मेरा प्रसव कराया है।"

फिर उसने अपने पेट पर बंधे कपड़े उतार कर फेंक दिये। बच्चे को लेकर वह वापिस आ गई। सबने यह समझा कि वह उसका लड़का है। क्योंकि बच्चा रास्ते में ही पैदा हो गया था, इसलिये वह वापिस अपने ससुराल आ गई। उसको बच्चे के साथ आता देख सब बड़े खुश हुए। फिर कुछ दिनों बाद लड़के का नाम निग्रोध कुमार रखा गया।

जिस दिन निग्रोध कुमार का जन्म हुआ था, उसी दिन राजगृह में, एक बनिये के शाखा कुमार नाम का लड़का और एक दर्जी के पोत्रिक नाम का लड़का पैदा हुआ। इसलिये उन तीनों को एक जगह पाला गया।

शिक्षा के लिए भी वे तीनों मिलकर तक्षशिला गये। वहाँ एक ही गुरु के यहाँ उनकी शिक्षा-दीक्षा एक साथ हुई। जब तक वे वहाँ रहे, पोत्रिक का सारा खर्च निग्रोध ने ही सहर्ष उठाया।

तक्षशिला से, शिक्षा समाप्त होते ही, वे पैदल देश देखते देखते, कुछ दिनों बाद काशी पहुँचे। उनके नगर में पहुँचने से पहिले अन्धेरा हो गया। उस दिन, एक मन्दिर के पास, पेड़ के नीचे सो रहे थे। सवेरा होने से पहिले पोत्रिक उठा और निग्रोध के पैर दबाने लगा। तब एक विचित्र घटना घटी।

उस समय पेड़ की टहनी पर दो मुर्गियाँ बैठी हुई थीं। ऊपर की टहनी पर बैठी मुर्गी ने, नीचे की टहनी पर बैठी मुर्गी पर बीट कर दी। दूसरी मुर्गी को गुस्सा आगया, उसने कहा—"तुझे इतना घमंड! शायद तुझे नहीं मालूम कि मैं कौन हूँ! तू मेरा इतना अपमान करता है, मैं कोई मामूली मुर्गी नहीं हूँ! जानती हो, जो मुझे खायेगा, वह दस हज़ार मुहरें पायेगा और बड़ा धनवान हो जाएगा। क्या समझ रखा है!"

यह सुन ऊपर की टहनी पर बैठी मुर्गी ने कहा—"मैं भी कोई मामूली मुर्गी नहीं हूँ। जानती हो, मैं कौन हूँ? जो कोई मेरी चरबी खायेगा, वह राजा होगा। और जो मेरा कलेजा खायेगा, वह सेनापति बनेगा और मेरी हड्डियों का माँस खाने वाला कोशाधिपति बनेगा।"
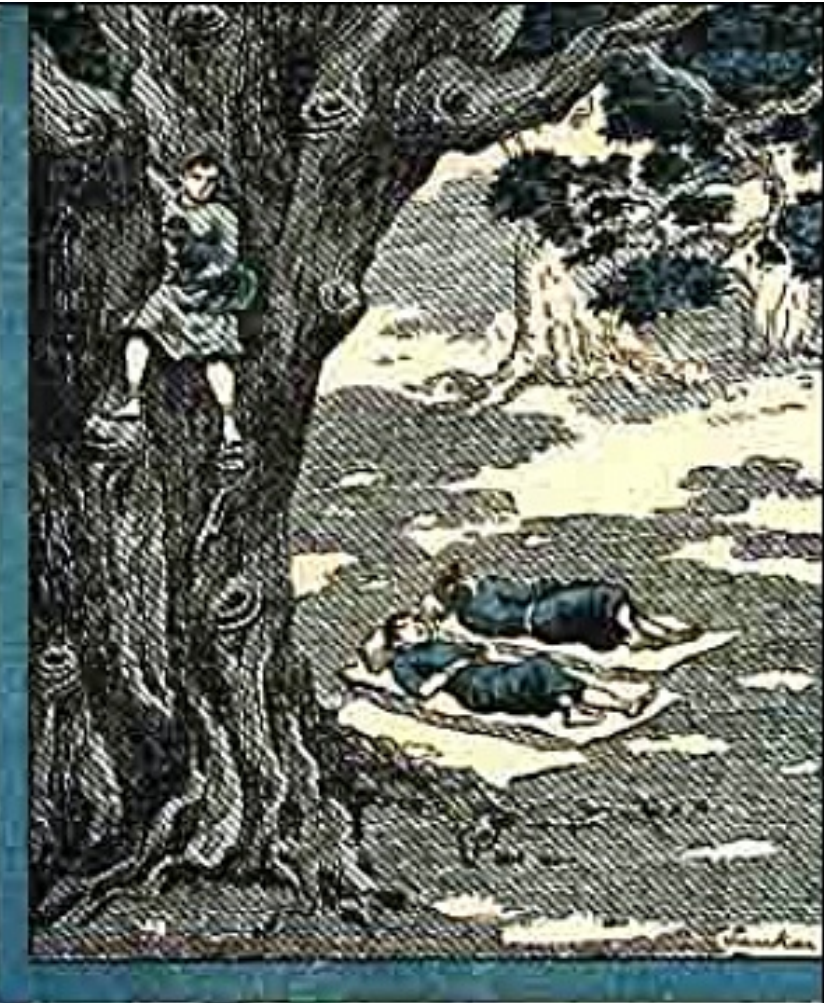
यह सुन पोत्रिक ने झट ऊपर की टहनी पर बैठी मुर्गी को पकड़ा और उसको पका भी दिया। जब मित्र उठे तो उसने निग्रोध को मुर्गी की चरबी, शाखा को कलेजा दिया और स्वयं हड्डी वाला माँस खाया। उसके बाद मित्रों को उस मुर्गी के बारे में सारी बात बताकर उसने कहा—"हम में निग्रोध राजा होगा। शाखा सेनापति, और मैं कोशाधिपति बनूँगा।"

फिर वे काशी नगर में पहुँचे। उनके पहुँचने के सप्ताह भर पहिले काशी का राजा मर गया था। उसके बाल-बच्चे न थे। नये राजा के निर्वाचन की घोषणा भी कर दी गई थी।

यह बात तीनों मित्र नहीं जानते थे। उस दिन तीनों ने एक ब्राह्मण घर में भोजन किया। वहाँ से वे राजोद्यान में गये, और पेड़ों के नीचे सो गये।

वे सो रहे थे कि उधर से राज पुरोहित एक थाल में राजोचित तलवार, पादरक्षक, छाता, चादर, लेकर, उस तरफ़ से रथ में गुज़रे।

पुरोहित रथ से उतरे और उन्होंने तीनों को सोते हुए देखा। उसने उन तीनों के तलवे देखे। उनमें से एक के पैर में ही चक्र था। इसलिये उसने उसे ही राजा चुना। इस प्रकार चुना हुआ व्यक्ति निग्रोध था।

तब पुरोहित ने मंगल वाद्य बजाने के लिए कहा। मंगल वाद्य सुनकर तीनों मित्र घबराते हुए उठ खड़े हुए। उनके चारों ओर भीड़ जमा हो गई। निग्रोध जान गया कि उसे काशी का राजा चुना

गया था। उसने तुरत शाखा को सेनापति नियुक्त किया।

इसके बाद, निग्रोध ने शाखा से कहा—"क्योंकि हम यहाँ बड़े बड़े पद पर नियुक्त हुए हैं, इसलिये हम अपने माँ-बाप को यहाँ बुला लेंगे। वे यहाँ आराम से रहेंगे। तुम जाकर हम दोनों के माँ-बाप को बुला लाओ।"

"इस काम के लिये आप मुझे भेजते हैं? यह मेरे गौरव के अनुकूल नहीं है।" शाखा ने कहा।

इसलिये इस काम के लिए निग्रोध ने पोत्रिक को नियुक्त किया। वह जाने को राजगृह गया तो, पर उसके साथ कोई आने के लिये तैयार न हुआ।

"हम यहाँ ही आराम से हैं।" उन्होंने कहा।

पोत्रिक काशी वापिस गया। भोजन कर, आराम करने के लिए वह शाखा के घर गया। उसने नौकरों से कहा—"मैं शाखा का मित्र हूँ। उससे कहो कि मैं आया हूँ।"

जब पोत्रिक ने उसको अपना मित्र बताया तो शाखा को गुस्सा आ गया। क्योंकि उसने मुर्गी की चरबी उसको न देकर,
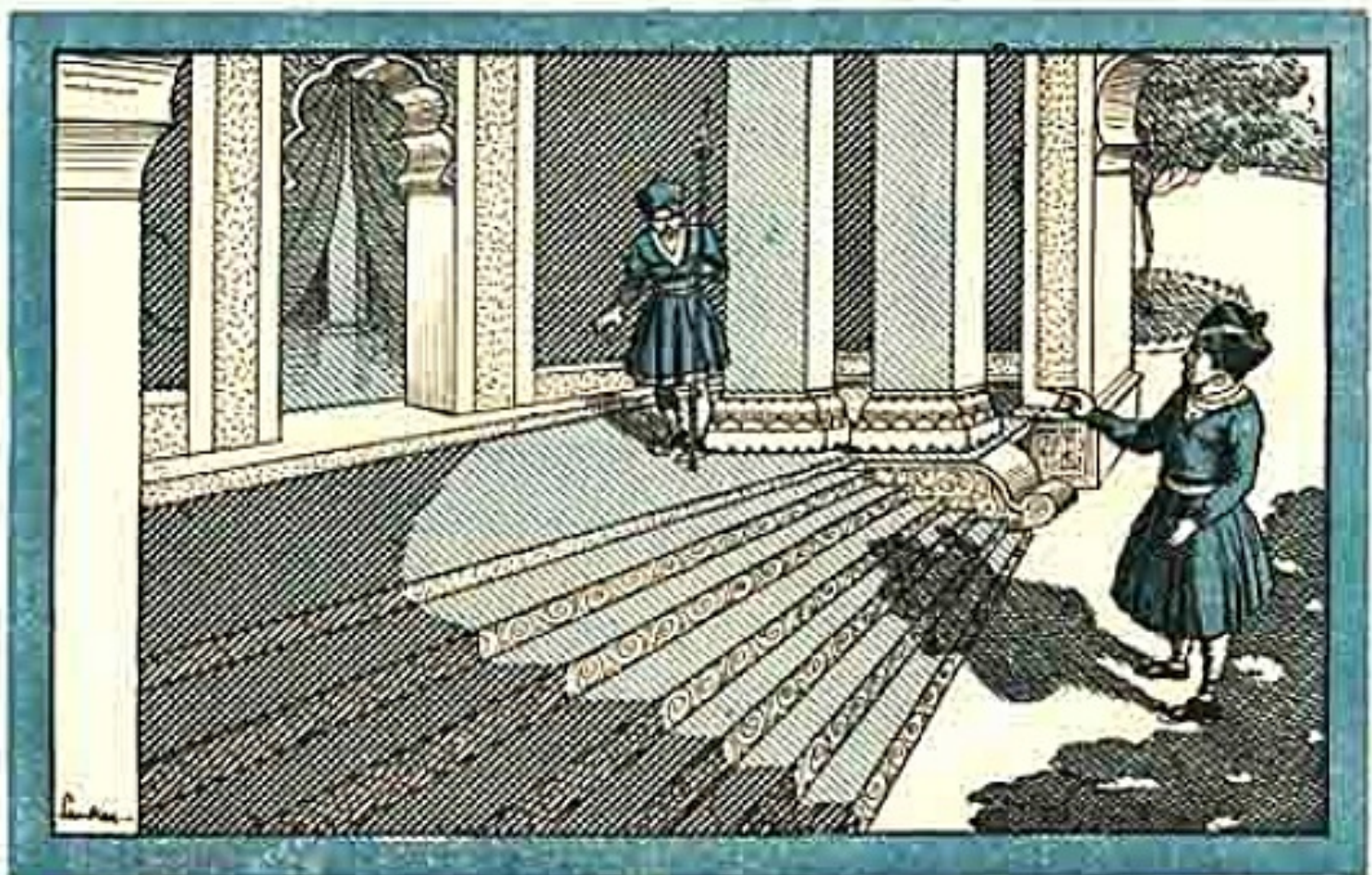
निग्रोध को दी थी, इसलिए वह उस पर बहुत दिनों से बिगड़ा हुआ था।

"इसे खूब पीट-पाट कर बाहर निकाल दो।"—उसने नौकरों से कहा।

नौकरों ने वैसा ही किया।

उसने पोत्रिक को पिटवा तो दिया, पर उसको यह फ़िक्र सताने लगी कि कहीं वह निग्रोध से उसकी शिकायत न करे। इसलिए वह तुरत निग्रोध से मिलने के लिए गया। उसका ख्याल था कि उसके सामने पोत्रिक, निग्रोध से शिकायत नहीं करेगा।

शाखा के पहुँचते पहुँचते पोत्रिक राजा के पास आ ही गया। शाखा के सामने ही, पोत्रिक ने जो कुछ गुज़रा था, निग्रोध से कहा।

यह सुनकर निग्रोध, तुरत शाखा पर आग-बबूला हो उठा।

"पोत्रिक स्वार्थहीन व्यक्ति है। यद्यपि तूने उसका कभी कोई भला नहीं किया, तब भी उसने तुझे खाने के लिए मुर्गी का कलेजा दिया। उसका कृतज्ञ रहना तो अलग, तूने उसको नौकरों से पिटवाकर उसका अपमान किया। तू सेनापति होने लायक नहीं है। मैं तुझे उस पद से निवृत्त करता हूँ।"—निग्रोध ने कहा।

पोत्रिक ने बीच में आकर कहा—"हम तीनों बचपन के साथी हैं। एक दूसरे की ग़ल्ती माफ़ करना धर्म है। इसे सेनापति के पद पर काम करने दो।"

निग्रोध ने दया करके शाखा को छोड़ दिया। तब उसने पोत्रिक को अपना कोशाधिकारी नियुक्त किया। उस पद का तभी निर्माण हुआ। उससे पहले राजाओं के पास कोशाधिकारी काम नहीं करते थे, ऐसा कहा जाता है।

[६]

[पद्मपाद और पिंगल, भल्लूक पर्वत की घाटी में बहनेवाली नदी के पास गये। नदी के जल को सुखाने के लिए, पद्मपाद ने समाधिस्थ हो मन्त्र-पाठ किया और पिंगल ने गदा लेकर उसकी रक्षा की। नदी का जल सूख गया। उसमें से मन्दिर के खण्डहर का शिखर दिखाई देने लगा।—फिर...]

पद्मपाद ने थोड़ी देर तक मन्दिर के शिखर की ओर देखकर, महामायावी के शिष्यों को पास आने के लिए इशारा किया। वे दोनों मन्दिर के पास खड़े थे। पद्मपाद का इशारा पाकर वे चुटकी भर में पद्मपाद के पास आये। आते ही भय के कारण काँपते हुए, उन्होंने उसे नमस्कार किया।

"मुझे यह देखकर प्रसन्नता हो रही है कि तुमने मेरी आज्ञा का पूर्णतः पालन किया। अब तुम जहाँ चाहो वहाँ जा सकते हो। मैंने तुम्हें पूरी स्वतंत्रता दे दी है।" पद्मपाद ने कहा।

महामायावी के शिष्य आपस में एक दूसरे की शक्ल देखने लगे। उनमें से एक ने हिम्मत बटोरकर, पद्मपाद को नमस्कार कर कहा—"महामान्त्रिक! हमारी प्रार्थना है कि आप कृपा करके हमारा निवेदन सुनें। आप जिस कार्य

में हमारी मदद चाहते थे वह कार्य तो पूरा हो गया है। कम से कम हमें अब तो मन्त्र के प्रभाव से कृपया विमुक्त कर दीजिये।"

"काम होने से पहिले ही क्या तुम्हें मैं स्वतंत्र कर दूँ!" पद्मपाद यह कहकर अट्टहास करने लगा। थोड़ी देर रुककर फिर उसने कहा—"मैं जानता हूँ कि तुम मामूली पिशाच नहीं हो! तुम महादुष्ट, क्रूर पिशाचों में से हो, यह बात मुझसे नहीं छुपी है। इसलिए, जब तक मैं तुम्हारे गुरु की समाधि से, जो मैं चाहता हूँ, ले नहीं लेता, तब तक तुम्हें छोड़ने का मेरा इरादा नहीं है। यह बात याद रखो! समझे?"

पद्मपाद की बात सुनते ही महामायावी के शिष्यों के मुँह एकदम फीके पड़ गये। उन्होंने पद्मपाद के सम्मुख साष्टांग करके कहा—"महामान्त्रिक! हम आपके गुलामों के गुलाम हैं।' जब से आपने अपनी मन्त्र-शक्ति से हमको पकड़ा है, तब से हमने पेट भर नहीं खाया है। हम शक्ति-हीन हो गये हैं। हम पर दया कीजिए!" वे रोने लगे।

पिंगल को उन दोनों की बातें सुनकर उन पर बड़ी दया आयी। उसने पद्मपाद की ओर मुड़कर कहा—"पद्मपाद!" वह कुछ और कहना ही चाहता था कि पद्मपाद ने उसे रोक कर, महामायावी के शिष्यों से यों कहा:

"मैं जानता हूँ कि तुम इतने दिनों से, बिना खाये-पिये उपवास कर रहे हो। अगर मैंने तुम लोगों पर रहम खाकर तुम्हें शिकार करने की शक्ति दी, तो तुम मुझे ही तुरत अपना शिकार बनाओगे! क्यों, मैं ठीक कह रहा हूँ न? बताओ।"

"आप जैसे महामान्त्रिक को क्या हम जैसे तुच्छ शिकार बनायेंगे!" महामायावी के शिष्यों ने दयनीय शक्ल बनायी।

पद्मपाद हँसा। उसने पिंगल के हाथ से जादू भरी गदा लेकर कहा—"तुम दोनों को मैं फिलहाल यह शक्ति देता हूँ कि तुम सिवाय मनुष्यों के, किसी को भी शिकार करके खा सकते हो। तुम अब क्या रूप चाहते हो?"

"पद्मपाद! इन्हें हाथी बना दीजिये। इस जंगल में वे आराम से जी सकेंगे।" पिंगल ने कहा।

"हाथी! महामान्त्रिक! हम हाथी नहीं बनना चाहते।" महामायावी के दोनों शिष्यों ने एक स्वर से कहा—"हाथी बना दिये गये तो हम केवल फल-पत्ते ही खा सकेंगे। हम शाकाहारी नहीं हो सकते। शाकाहार हमारे लिए विष के समान है।"

"अच्छा तो यह बात है, तो मैं तुममें से एक को शेर...." कहकर पद्मपाद ने महामायावी के एक शिष्य के सिर पर गदा रखी। वह तुरत शेर बन गया। "और दूसरे को बब्बर शेर बना दूँगा।"

कहकर उसने दूसरे के सिर पर गदा रखी। वह फौरन बब्बर शेर हो गया।

पिंगल ने थोड़ी देर उनकी ओर आश्चर्य से देखकर कहा—"अब तुम जितना माँस चाहो, उतना खाओ। जाओ, उस जंगल में जाओ।" उसने शेर और बब्बर शेर की पीठ थपथपाई। हिंस्र जन्तुओं के रूप में, महामायावी के शिष्य, भयंकर गर्जन करते हुए जंगल की ओर भाग गये।

पद्मपाद ने भी थोड़ी देर तक महामायावी के शिष्यों की ओर देखा, फिर उसने

पिंगल से कहा—"पिंगल, अब हमें बहुत सावधान रहना होगा। हमारे प्रयत्नों को विफल करने के लिए, और मौका मिलने पर हमारा संहार करने के लिए कई दुष्ट शक्तियाँ कोशिश कर रही हैं। हमें सतर्क रहना चाहिए। ख़ैर, आओ अब हम अपना काम करें। इस टूटे हुए मन्दिर का शिखर तुम्हें अच्छी तरह दिखाई दे रहा है न!" पिंगल ने सिर हिलाया।

"तो अब, तुम्हें महामायावी की समाधि के पास जाना होगा। इस समाधि के समीप जाने के लिए, तुम्हें छः द्वार पार करने होंगे। उन छः द्वारों का छः बड़े बड़े राक्षस पहरा दे रहे हैं। वे तुम्हारा नाश करना चाहेंगे। अगर तुम उन्हें देखकर ज़रा भी डरे, तो न केवल हमारा काम ही न होगा, परन्तु हो सकता है कि हम मारे भी जायँ।" पद्मपाद ने कहा।

पिंगल ने कोई जवाब न दिया। उसकी नज़र नदी के गर्भ में स्थित मन्दिर की ओर ही थी। पद्मपाद ने उसे देखकर कहा—"पिंगल आओ, अब हम मन्दिर की ओर चलें। उसके छः दरवाज़ों में से मैं पहिले दरवाज़े तक आ सकता हूँ। उस दरवाज़े के खोलने के बाद, तुम्हें ही बाकी पाँच दरवाज़ों को खोलकर, समाधि के पास जाना होगा।"

पद्मपाद और पिंगल सूखी नदी में से, जिसमें एक बून्द भी पानी न था, पैदल चलकर टूटे हुए मन्दिर के पास पहुँचे। देवालय का पहिला द्वारा देखनेवालों में कंपकंपी भी पैदा कर देता था। देवदारु के बने हुए बड़े बड़े किवाड़ों पर भयंकर मूर्तियाँ खुदी हुई थीं। दोनों किवाड़ों को बन्द करनेवाले, दो बड़े कीलों से

लिपटा लिपटा एक साँप फुँकार रहा था। पद्मपाद ने उस सर्प की ओर हाथ उठाकर कहा—"पिंगल! तुम निर्भय हो उस साँप के पास जाओ और उस पर तुम दो बार हाथ उठाओ। फिर अन्दर से, कोई भयंकर आवाज़ में तुम से कुछ प्रश्न पूछेगा। जब तुम निर्भय हो सब बताओगे तो दरवाज़ा खुल जायेगा। मगर उसके बाद क्या होगा,—अगर मैं कहने लगूँ तो मेरी मन्त्र-शक्ति ही बेकार हो जायेगी। यदि तुम कहीं डरे नहीं, तो सब द्वार खुलते जायेंगे, और तुम महामायावी की समाधि तक पहुँच सकोगे।"

"पद्मपाद! मैं किसी भयंकर शक्ति को देखकर भी न भयभीत होऊँगा। परन्तु इस मन्दिर में ऐसी कोई शक्ति तो नहीं है, जो मुझे धोखा देकर मार सके?" पिंगल ने पूछा।

"इस मन्दिर में कई ऐसी शक्तियाँ हैं, जो तुम्हें बिना धोखा दिये ही मार सकती हैं। यदि निर्भय हो तुम आगे बढ़ सके, तो वे तुम्हारा कुछ न बिगाड़ सकेंगी। जब तुम समाधि से हमारे लिए ज़रूरी चीज़ें ले आओगे, तब इस संसार में तुम से अधिक शक्तिवान और धनवान कोई न होगा।" पद्मपाद ने कहा।
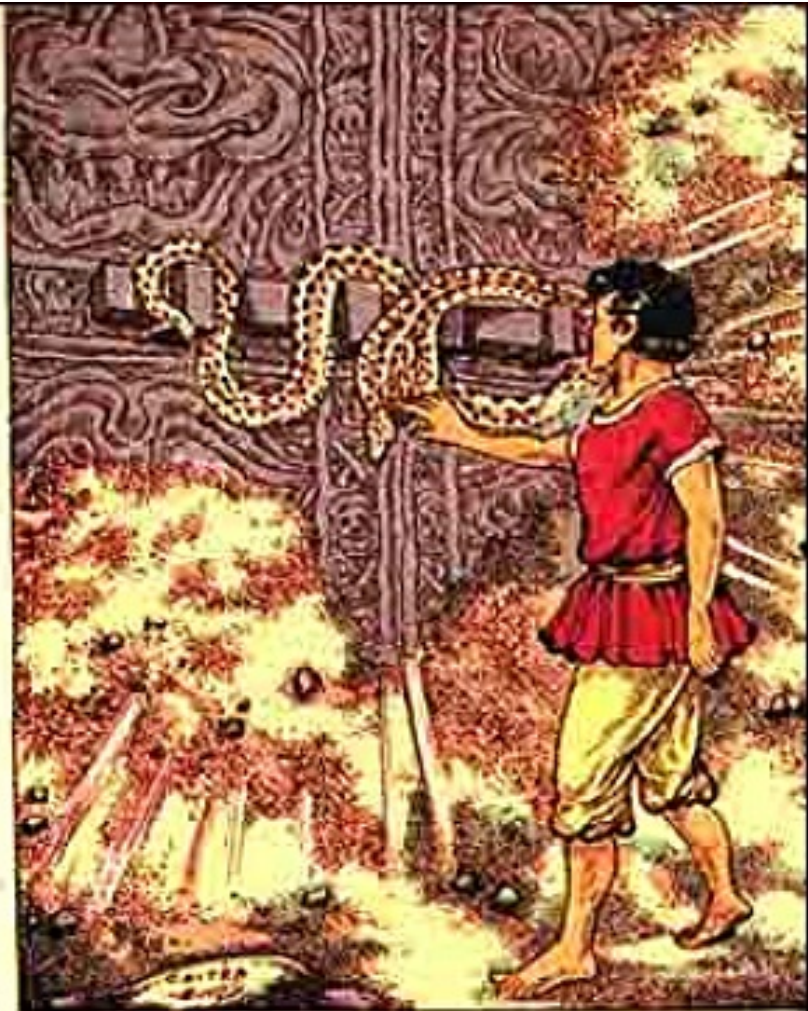
"इसलिए तो मैं इतने ख़तरों का सामना करने के लिए तैयार हुआ हूँ।" कहता हुआ पिंगल आगे बढ़ा। और पद्मपाद उस स्थल की ओर पीछे गया, जहाँ समाधिस्थ होकर उसने मन्त्र-पाठ किया था।

पिंगल निर्भय हो द्वार के पास पहुँचा। फुँकार मारते हुए सर्प की ओर उसने अपना दायें हाथ दो बार उठाया। वह भयंकर साँप निष्प्राण-सा हो गया। परन्तु

उसी समय दरवाज़े के पीछे भयंकर शब्द हुआ। कर्कश-स्वर में, एक आवाज़ ने यह पूछा :

"यह डरपोक कौन है, जो अन्दर कैसे जाये जाय, यह जाने बगैर ही, समाधि के प्रथम द्वार के पास आया है?"

"मेरा नाम पिंगल है। मैं अवन्ती नगर का मछियारा हूँ। मेरा गुरु पद्मपाद है।...."

"बस बस! मैं यह नहीं जानना चाहता कि तेरा गुरु कौन है। तू मछियारा पिंगल है। इसलिए यह द्वार खोल रहा हूँ।"— यह आवाज़ हुई। तुरत किवाड़ ज़ोर से खुल गये। एक पहाड़-सा काला-कलूटा आदमी, चमचमाती तलवार हाथ में लेकर, रास्ता रोके खड़ा था। पिंगल निर्भय हो आगे बढ़ा।

तलवार की पहुँच तक पिंगल गया ही था कि पर्वताकार व्यक्ति ने हुँकार करते हुए पूछा—"क्या तू मछियारा पिंगल ही है? तू अपना गला दिखा, जिससे कि एक चोट में ही वह धड़ से अलग हो जाये।"

झट पिंगल ने एक निश्चय किया। वह यह जान गया कि इतनी दूर आकर वापिस जाना ख़तरे से खाली न था। अगर उसने अपना गला दिखाया तो उस भयंकर व्यक्ति की तलवार उसे काट सकती थी। कुछ भी हो, यह सोचकर पिंगल ने एक कदम आगे रखा। उसने गला झुकाया। तुरत उस महाकाय मनुष्य के हाथ से तलवार नीचे गिर गई। वह पिंगल के सामने शव की तरह गिर गया।

यह देख कर, न जाने कहाँ से पिंगल में असाधारण धैर्य और साहस आ गया। उसने सीना तानकर, पहिला द्वार पार

किया। वह दूसरे द्वार के समीप गया। उस द्वार के किवाड़ भी बन्द थे। वहाँ एक घुड़सवार खड़ा था। उसके हाथ में एक भाला था। पिंगल को देखकर, निशाना ठीक कर, वह बिना कुछ कहे, पिंगल की छाती पर कूदा। पिंगल ने छाती पर से अपना कुड़ता उठाकर कहा— "जानते हो मैं कौन हूँ! मैं मछियारा पिंगल हूँ।" कह कर वह आगे बढ़ा। तुरत घोड़े के साथ, घुड़सवार भी, ज़मीन पर ढेर-सा हो गया। पिंगल द्विगुणित उत्साह से दूसरा द्वार पार कर तीसरे द्वार पर पहुँचा।

तीसरे द्वार के सामने एक तीरन्दाज़ धनुष पर बाण चढ़ाये पिंगल की ओर देखता खड़ा था। पिंगल बिना डरे आगे बढ़ता गया। उसने तीरन्दाज़ को अपना माथा अंगुली से दिखाया। फिर क्या था, तीरन्दाज़ एक तरफ़ गिर गया। पिंगल ने तीसरा दरवाज़ा भी पार कर लिया। वह चौथे दरवाज़े के पास पहुँच रहा था कि उसे भयंकर चीत्कार सुनाई दिया। द्वार के पास दो गैंड़ें उस पर कूदने के लिए तैयार खड़े थे। निर्भय हो पिंगल आगे बढ़ा। और उसने गैंड़ों के सींघों को अपने हाथ से छुआ। तुरत वे राख राख हो गये।

जब पिंगल पाँचवें दरवाज़े के पास पहुँचा तो वहाँ इसे एक विचित्र पशु दिखाई दिया। उसे देखकर, उसको भय की अपेक्षा आश्चर्य अधिक हुआ। उसका शरीर और पिछले पैर शेर के जैसे थे। सिर और आगे के पैर गिद्ध के जैसे थे।

"यह क्या पशु है!" पिंगल सोच ही रहा था कि वह गरुड़-सिंह, पिछले पैरों पर खड़ा हो, पंख फड़फड़ाता पिंगल पर कूदने को तैयार हुआ।

पिंगल एक क्षण तो स्तब्ध खड़ा रहा, फिर उसने कुछ सोचकर कहा—"हट रास्ते से, मैं मछियारा पिंगल हूँ।" वह आगे बढ़ा। गरुड़-सिंह फूट-सा पड़ा। और उसके टुकड़े टुकड़े हो गये। पिंगल को उसे देखकर दया आई। पाँचवा द्वार पार कर वह छठे द्वार के पास गया।

जब उसे यह ख्याल आया कि छठा द्वार पार करते ही वह महामायावी की समाधि के पास पहुँच सकेगा, पिंगल बड़ा प्रसन्न हुआ। अंगूठी, बज्रों से जड़ी तलवार, भूगोल का ग्लोब—ये तीनों चीज़ें उसको लानी थीं।

पिंगल अमित उत्साह के साथ छठे दरवाज़े के पास गया। वह यकायक चौंका। सामने दरवाज़े के पास पद्मपाद गदा लेकर खड़ा था। पिंगल, मूर्छित-सा आगे बढ़ने को ही था कि "ठहरो, ठहरो, तुम कौन हो!" उसे भयंकर आवाज़ सुनाई दी। "मेरी आँखों में धूल झोंकने के लिए किसी राक्षस ने पद्मपाद का रूप धर लिया है।"—पिंगल सोच रहा था कि चमकती हुई वह गदा उसकी आँखों के सामने चक्कर काटने लगी। पिंगल भयभीत हो पीछे हटा।

"कोई चोर है। मछियारा पिंगल नहीं है। इसे बाहर हटाओ। दूर फेंक दो।" किसी का यह चिल्लाना पिंगल को सुनाई दिया। फिर उसकी पीठ पर, सिर पर, कोई डंडे और हाथ से मारने लगा। एक एक द्वार, एक के बाद एक बन्द होता गया। पिंगल ने भय से काँपते हुए, जब बन्द आँखें खोलीं, तो वह हवा में उड़ा जा रहा था और नीचे पद्मपाद हाथ फैलाये खड़ा था ताकि वह नीचे न गिर जाये। (अभी और है)
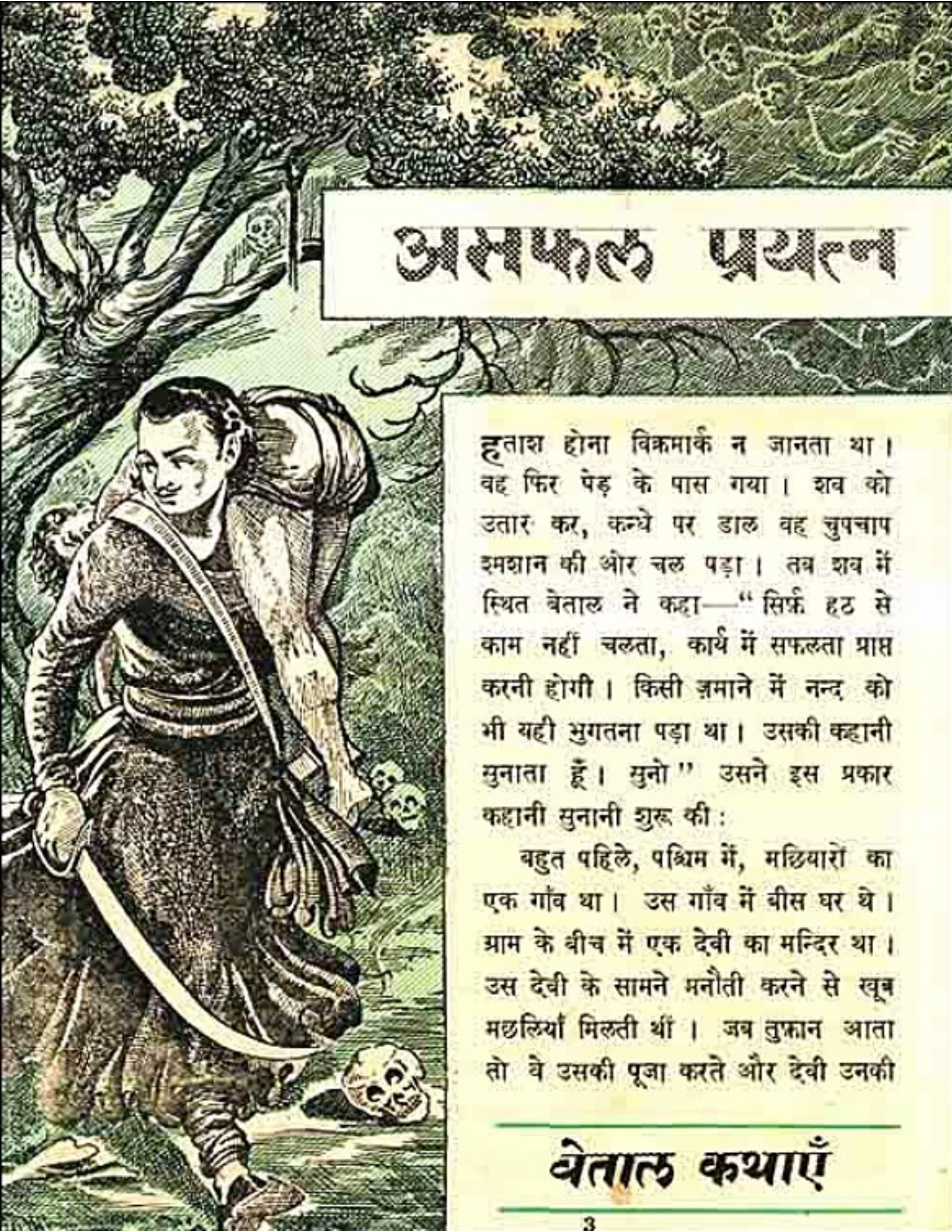
असफल प्रयत्न

हताश होना विक्रमार्क न जानता था। वह फिर पेड़ के पास गया। शव को उतार कर, कन्धे पर डाल वह चुपचाप श्मशान की ओर चल पड़ा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा—"सिर्फ़ हठ से काम नहीं चलता, कार्य में सफलता प्राप्त करनी होगी। किसी ज़माने में नन्द को भी यही भुगतना पड़ा था। उसकी कहानी सुनाता हूँ। सुनो" उसने इस प्रकार कहानी सुनानी शुरू की:

बहुत पहिले, पश्चिम में, मछियारों का एक गाँव था। उस गाँव में बीस घर थे। ग्राम के बीच में एक देवी का मन्दिर था। उस देवी के सामने मनौती करने से खूब मछलियाँ मिलती थीं। जब तुफ़ान आता तो वे उसकी पूजा करते और देवी उनकी

बेताल कथाएँ

रक्षा करती। सब मछियारे उस देवी पर जान देते थे।

उन लोगों में, परम्परा के अनुसार सब से अधिक समर्थ, अनुभवी और योग्य व्यक्ति को मुखिया चुना जाता था। प्रायः जो उस गाँव में पैदा होता, वहीं अपना धंधा करता, और मिट्टी में मिल जाता। पर कभी कभी ऐसा भी होता था कि नौजवान, बड़े बड़े ज़हाज़ों में नौकरी कर लेते थे, और जहाज़ों में द्वीपान्तर हो आते थे। इनमें से कई किस्मत के मारे जहाज़ के साथ डूबकर मर भी जाते थे और बाकी खूब धन कमा कर, बड़े बड़े नगरों में आराम से रहना शुरू कर देते। इसलिये नौजवानों का इस तरह गाँव छोड़कर चले जाना बड़े बुजुर्गों को पसन्द न था।

नन्द, मुखिया का दूसरा लड़का था। उसका भाई सुन्द उससे काफ़ी बड़ा था। जब उसकी उम्र केवल सात वर्ष की ही थी कि उसका पिता गुज़र गया। रेणुक नाम का व्यक्ति मछियारों का मुखिया चुना गया। सुन्द ने पिता से मछली पकड़ना सीखा था। इसलिए वह अकेला तमेड़ में मछली पकड़ने

निकल आता था। वह सब कुछ जानता था। परन्तु नन्द को कतई कोई अनुभव न था। इसलिये उसकी माँ ने उसको, रेणुक के यहाँ, मछली पकड़ना वगैरह सीखने के लिए रखा।

नन्द बड़ा चुस्त और तेज़ था। साहस की भी उसमें कमी न थी। इसलिये रेणुक उसकी बड़ी प्रशंसा करता। गाँव में उसके बारे में सब आश्चर्य किया करते। "अगर ऐसा नौजवान नाविक बन गया, तो बहुत कमाएगा।" मछियारे यह कभी कभी उसके बारे में कहा करते। तुरत नन्द की माँ कहा करती—"मैं यह हरगिज़ कभी न मानूँगी।"

रेणुक के एक लड़की थी। उसका नाम सुन्दरी था। वह नन्द से दो वर्ष छोटी थी। क्योंकि नाम के अनुकूल वह सचमुच सुन्दर थी, इसलिये सब उसको लाड़-प्यार करते। एक दिन रेणुक ने मज़ाक में पूछा—"जब तुम बड़ी होगी तो किससे विवाह करोगी?" तो उसने जवाब दिया—"और किससे! वह जो नन्द बैठा है, उससे। मैं किसी और से शादी नहीं करूँगी। हाँ।"

होगी। क्या यह सब मैं कर सकूँगा?" नन्द इस उधेड़बुन में रहता।

वह अकेला मन्दिर गया। और देवी को सम्बोधित करके उसने कहा—"माँ, अगर तूने मुझे खूब धन दिया, तो मैं समुद्र के किनारे तेरे लिए एक ऐसा मन्दिर बनाऊँगा, जो दो कोस दूर से दिखाई दे। तब मैं और सुन्दरी विवाह कर लेंगे, और रोज़ तेरी प्रार्थना करेंगे।"

फिर उसने अपनी माँ के पास जाकर कहा—"माँ! मैं नाविक बन जाऊँगा।"

माँ यह सुनकर भौंचक्का रह गई। उसने अपने लड़के को समझाया-बुझाया—"बेटा! तुम दोनों मेरे लिये मेरी दोनों आँखों के बराबर हो। अगर तू चला गया तो मैं कानी हो जाऊँगी। इस छोटी उम्र में तू नाविक कैसे बनेगा? अगर तूने रुपया-पैसा कमा भी लिया तो तू वापिस नहीं आयेगा।" उसकी माँ ने कहा।

यह सुनते ही नन्द के मन में तूफ़ान-सा उठ आया। वह सुन्दरी को बहुत पसन्द करता था। पर जब उस लड़की ने कहा कि सिवाय उसके, वह किसी और से विवाह न करेगी, तो उसको अपना सारा भविष्य सामने स्पष्ट दिखाई देने लगा। सात-आठ वर्ष में, सुन्दरी विवाह के योग्य होनेवाली थी। तब दोनों का विवाह होगा। इसलिये इस बीच में ही बहुत-सा धन कमाना होगा। इस गाँव में, मछली पकड़ते रहने से पैसा न जमा हो सकेगा। इसलिये किसी जहाज़ में नौकरी करनी

नन्द ने शपथ की कि वह अवश्य वापिस आयेगा। उसने माँ से देवी के सामने की हुई मनौती के बारे में भी कह दिया। वह नाविक बनने को उतावला

हो रहा था। वह अपना इरादा बदलने को तैयार न था। माँ मान गई। नन्द तुरत गाँव छोड़कर चला गया।

कहना होगा कि देवी ने उसकी इच्छा पूरी की। क्योंकि जहाज़ में उसको नौकरी मिल गई। वह चुस्त था ही, नौकरी में उसकी चुस्ती ने उसकी काफ़ी मदद की। कितनी ही बार उसने जहाज़ के व्यापारियों की रक्षा की। तूफ़ान में जब अनुभवी नाविक भी घबरा जाते थे, उसने होशियारी से जहाज़ चलाया। उसकी कार्य-कुशलता को देखकर कितने ही व्यापारियों ने उसको इनाम दिया। अपने लाभ में उसे भी हिस्सा दिया। उसने बहुत-सा रुपया कमा लिया।

आठ वर्ष उसने नाविक के रूप में काम किया। खूब धन कमाकर वह अपने गाँव लौटा। उसके आने के दो साल पहिले ही सुन्दरी, सुन्द की पत्नी बन चुकी थी। नन्द की आशाओं पर पानी फिर गया। उस सुन्दरी के लिए ही, इतनी मुसीबतें झेलकर, वह इतना धन कमाकर लाया था। अब उसे अपना भविष्य अन्धकारमय लगने लगा।

सुन्दरी के अतिरिक्त वह किसी और से विवाह नहीं करना चाहता था। क्योंकि पिछले आठ साल से वह सुन्दरी को अपनी पत्नी मानता आ रहा था।

परन्तु सुन्दरी नन्द को कभी की भूल चुकी थी। उसे अपनी ही बात—सिवाय नन्द के मैं किसी और से शादी नहीं करूँगी—याद न रही। नन्द के गाँव छोड़कर चले जाने के चार वर्ष बाद सुन्दरी के पिता का देहान्त हो गया। सुन्दरी और उसकी माँ का पालन-पोषण करनेवाला कोई आदमी न था। उनके घर रोटी

के लाले पड़ने लगा। इस बीच सुन्द मछली पकड़ने में बहुत प्रवीण हो गया। उस गाँव में सुन्दरी से विवाह करने के लिए उससे अधिक योग्य कोई न था। क्योंकि उसने, सुन्दरी और उसकी माँ की, आपत्ति में सहायता की थी; इसलिए उसके साथ उसने शादी कर ली। यह सब जान लेने के बाद नन्द किसी को दोष न दे सका। परन्तु मन ही मन वह सुन्दरी को चाहता रहा। उसके मन में यह दुर्बुद्धि भी आई कि सुन्दरी को किसी दूर देश ले जाकर उसके साथ विवाह कर लिया जाये। उसने अपना यह विचार सुन्दरी को भी बताया। सुन्दरी ने इसके बारे में अपनी सास से कहा।

नन्द की माँ को अपने लड़के की स्थिति देखकर बड़ा क्षोभ हुआ। उसने अलग ले जाकर उससे कहा—"बेटा! कुटुम्ब पर कलंक लगानेवाली ऐसी ख़राब चालें तूने कहाँ सीखी हैं? देश-देश घूम-फिर कर क्या तू इतना बड़ा हो गया है? तेरे लिए मैं और तेरी भाभी अलग अलग हैं? अपने सुख के लिए तू अपने भाई के घर में आग लगाएगा? तूने काफ़ी रुपया

कमा लिया है। तू कहीं भी आराम से रह सकता है। इस गाँव में तुझे यों जलता मैं नहीं देख सकती। कहीं और चला जा।"

"अच्छा माँ! मै चला जाऊँगा।" नन्द ने सिर नीचा करके कहा।

अगले दिन सवेरे, सुन्द जब तमेड़ लेकर, मछली पकड़ने जा रहा था, तब नन्द ने कहा—"भाई! मछली पकड़े बहुत दिन हो गये हैं। आज मैं भी एक तमेड़ लेकर मछली पकड़ने आऊँगा।"

दोनों भाई, अलग अलग तमेड़ लेकर, समुद्र में एक एक करके निकल पड़े।

सूर्यास्त होने से पहिले, सुन्दरी और उसकी सास, भोजन लेकर समुद्र के किनारे पहुँचीं। थोड़ी देर में सब वापिस आ गये। मगर नन्द वापिस न आया। उसको ढूँढ़ने के लिए, सुन्द और कई मछियारे समुद्र में वापिस गये। पर उनको उसकी तमेड़ ही दिखाई दी। नन्द का कहीं पता न था। उसने समुद्र में कूदकर आत्म-हत्या कर ली थी।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा—"राजा! मुझे एक सन्देह हो रहा है। नन्द की असफलता और निराशा का

कौन कारण था? क्या वह देवी थी, जो उसकी इच्छा को पूरा न कर सकती थी या सुन्दरी, जिसने उसमें कई आशाएँ पैदा कीं और आख़िर उसके भाई से विवाह कर लिया? या नन्द की माँ, जिसने उसके रास्ते में अड़चनें पैदा कीं? अगर जान बूझकर तुमने उत्तर न बताया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

"इसमें देवी का कोई दोष नहीं है। अगर सुन्दरी के साथ विवाह करना ही उसका उद्देश्य था, तो देवी से वह, वह वर माँग सकता था। नन्द ने वह नहीं किया। वह इस अहंकार में रहा कि जब वह खूब धन कमाकर वापिस आयेगा तो वह आसानी से, सुन्दरी से विवाह कर सकेगा। सुन्दरी का भी इसमें कोई कसूर नहीं है। जब उसने कहा था कि वह नन्द से विवाह करेगी, वह एक नादान लड़की थी। वह अपने उस वचन के लिए जिम्मेवार नहीं ठहराई जा सकती। उसकी माँ का भी कसूर नहीं है। वह शुरू से ही नन्द के हित की बात कहती आई थी। अगर वह उसकी बात मानता और जहाज़ में नौकरी करने न चला जाता, तो सुन्दरी उसी की पत्नी होती। वह माँ की सालाह सुने बग़ैर चला गया। वह दोनों लड़कों का सुख चाहती थी। वह छोटे लड़के के सुख के लिए, बड़े लड़के का सुख नष्ट करना नहीं चाहती थी, न कुटुम्ब पर वह कलंक लगता देखना चाहती थी। नन्द की दुर्बुद्धि ही उसकी मृत्यु का कारण है। उसी का दोष है।" विक्रमार्क ने कहा।

इस प्रकार राजा का मौन-भंग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य हो गया और वृक्ष पर जा बैठा।
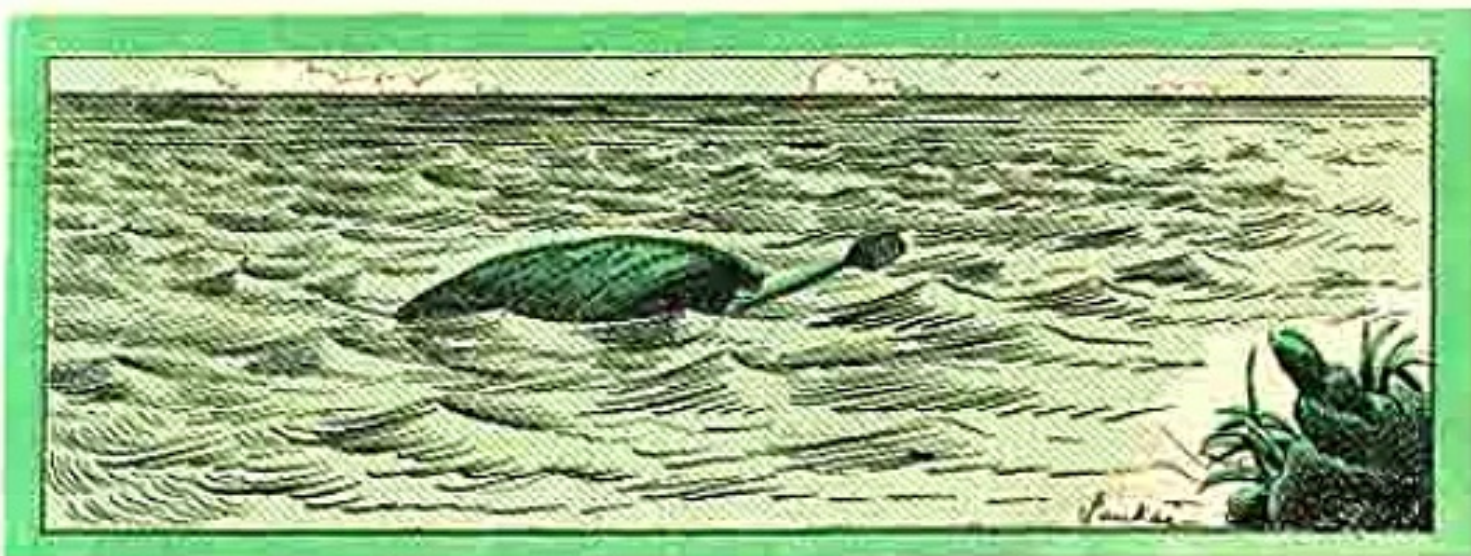
भेद

एक बार दो राजाओं में झगड़ा हुआ। उनमें से एक वस्तुतः राजपूत क्षत्रिय कुल में पैदा हुआ था और दूसरा एक नीच कुल में।

उस नीच ने यह घोषणा की कि जो कोई उसके शत्रु का सिर काटकर लायेगा उसको एक लाख रुपया इनाम देगा।

यही नहीं, उसने अपने शत्रु के पास यह पत्र भी भेजा—"मेरी नज़र में तुम एक कुत्ते की तरह हो। तुम्हारी जान के लिये मैंने एक लाख रुपये की क़ीमत निश्चित की है।"

इस पत्र का उत्तर राजपूत क्षत्रिय राजा ने यों दिया—"मेरी नज़र में तुम भी एक राजा हो। परन्तु मैं तुम्हारी ज़िन्दगी की कीमत नहीं लगाता। जो कोई तुम्हारा सिर काटकर लायेगा मैं उसे एक दमड़ी भी न दूँगा।"

यह उत्तर देख नीच राजा हैरान रह गया।

नाई का मन्दिर

किसी ज़माने में बग़दाद शहर में एक करोड़पति रहा करता था। उसके एक ही लड़का था। उसका नाम था कमर। पिता के बाद, वह पिता की सम्पत्ति का उत्तराधिकारी बना। उसके कई नौकर-चाकर थे। वह वैभव के साथ रहने लगा। पोशाक, या खाने-पीने की चीज़ों में वह कभी कोई कमी न होने देता। परन्तु न मालूम, वह स्त्रियों से क्यों दूर भागता था—इसी कारण वह विवाह भी न करना चाहता था।

एक बार एक तंग गली से वह जा रहा था कि सामने से स्त्रियों की एक झुण्ड आया। क्योंकि वह औरतों को पसन्द नहीं करता था, इसलिए उनके पास आने से पहिले ही, वह पासवाले बगीचे में चला गया और एक तख़्ते पर उल्टा मुँह करके लेट गया। ठीक उसी समय सामने के घर से एक युवती आई और पौधों को पानी देने लगी।

वह स्त्रियों की साया से भी बचता आया; पर न मालूम क्यों, कमर उसको देखते ही, उस पर मोहित हो गया। उसका मुँह, उसको चन्द्रमा की तरह लगा। वह यह सोच ही रहा था कि वह किसकी लड़की है, और उससे विवाह किया जा सकता है कि नहीं, इतने में उस घर में बग़दाद शहर का क़ाज़ी नौकर-चाकरों साथ घुसा। कमर ने सोचा, जो युवती उसने देखी थी, वह क़ाज़ी की ही लड़की है, इसलिए उसकी शादी उससे होनी नामुमकिन थी। वह निराश अपने घर लौट गया।

उसके हाव-भाव देखकर उसके नौकर चाकर बड़े चिन्तित थे। "आप क्यों ऐसे

श्री अमरनाथ अग्रवाल

हैं ! क्या तबीयत ठीक नहीं है ! क्या हकीमों को बुलायें ?" उन्होंने अपने मालिक से पूछा। कमर ने उनसे सच न कहा। पर घर में रहनेवाली एक बूढ़ी आया ने सब कुछ मालूम कर लिया। "इतने दिनों बाद, तुम्हारे मन में किसी के लिए प्रेम जगा है। बताओ, वह कौन है ! मैं उसके साथ तुम्हारी शादी कराने का प्रयत्न करूँगी।"

उसके यह कहते ही क़मर का दुख आधा हो गया। उसने बुढ़िया से, सब कुछ विस्तार पूर्वक सुना दिया।

"काज़ी की लड़की ही न ! मैं उसे अच्छी तरह जानती हूँ। उसे शादी के लिए मनाना मेरा काम रहा। तुम फ़िक्र न करो।" उसने अपने मालिक को ढाढ़स बँधाया। परन्तु बुढ़िया का पहिला प्रयत्न विफल रहा। काज़ी की लड़की से मिलकर कमर के बारे में उसने कहना शुरू ही किया था कि वह झुंझलाती हुई उठी-"तेरा मालिक कौन है, मैं नहीं जानती। अगर तूने इस तरह की बातें मुझ से की तो पिताजी से कहकर मैं तुझे जेल भिजवा दूँगी।" उसने कहा।

पर बुढ़िया हिम्मत हारनेवाली न थी। दो दिन बाद, जब काज़ी घर में न था, वह उसके सामने जाकर रोने-धोने लगी। "अब क्या होगा ! मालिक नहीं बचेगा। मैंने उसे अपने लड़के की तरह पाला-पोसा है। उसने जब से तुझे देखा है, तब से चारपाई पकड़ ली है। रोज़ रोज़ कांटे की तरह सूखा जा रहा है।" बुढ़िया ने रोते-चिल्लाते कहा।

काज़ी की लड़की का हृदय ज़रा नरम पड़ा। "तुम्हारा मालिक पागल-सा मालूम होता है। एक स्त्री के लिए क्या कोई यूँ

मरा करता है! आनेवाले शुक्रवार को जब मस्जिद में नमाज़ पढ़ी जा रही हो, तब उसे ज़रा हमारे घर आने के लिए कहना। मैं उससे बातचीत करके जान लूँगी कि वह कैसा आदमी है। अगर यह बात पिता जी को पता लग गई तो बड़ा ख़तरा है। " उस लड़की ने बुढ़िया से कहा।

" तूने हमारे मालिक को जान दी है, बेटी! एक बार तूने उससे बात की तो तू ही जान जायेगी कि वह तुझ से कितना प्रेम करता है।" बुढ़िया यह कहकर वापिस चली गई।

जब उसने यह ख़बर कमर को सुनाई तो वह बड़ा प्रसन्न हुआ। शुक्रवार आया, और वह अपनी प्रियतमा को मिलने की तैयारी करने लगा।

" बेटा! अभी तो दुपहर की नमाज़ में काफ़ी वक्त है। दाढ़ी बढ़ी हुई है। नाई को बुलवाती हूँ।" बुढ़िया ने कहा। कमर उसकी बात मान गया।

थोड़ी देर बाद एक नाई आया। उसने कमर को देखते ही कहा—" क्यों बाबू! आजकल आप इतने कमज़ोर क्यों दिखाई देते हैं!"

"पिछले दिनों मैं ज़रा बीमार था। अब तबीयत ठीक है।" कमर ने कहा।

"शुक्रवार के दिन यदि हज़ामत बनाई जाये तो कहा जाता है, सत्तर आपत्तियाँ टल जाती हैं। आँखों और बदन के लिए भी यह अच्छा है।" नाई ने कहा।

नाई की बकवास सुनते सुनते कमर ऊब गया। "यह बकवास क्या लगा रखी है। तुरत दाढ़ी बनाओ।" उसने कहा।

तब भी नाई ने अपना काम न शुरु किया। "अभी अच्छा समय नहीं आया है। थोड़ी देर और है। उसके बाद हज़ामत के लिए अच्छा समय है। आप शायद जानना चाहें कि क्यों? आज कुज और बुध एक ही ग्रह में प्रवेश कर रहे हैं। परन्तु एक बात है। लगता है, आप किसी से मिलने जा रहे हैं। नये व्यक्तियों से मिलने के लिए आज का दिन अच्छा नहीं है। इसलिए हो सकता है कि कोई खतरा हो।

कमर ने गुस्से में कहा—"तू अपनी बकवास बन्द करता है कि नहीं? मैंने तुझे हज़ामत बनाने के लिये बुलाया है, ज्योतिष बखारने के लिए नहीं।"

"बाबू! अब ग्रहों के बारे में इतनी लापरवाही मत दिखाइये। बहुत ख़तरा है। आप क्या समझ रहे हैं!" नाई ने कहा।

"अरे भाई! तू मुझे कहाँ से आ मिला? मैं नहीं जानता कि इस बग़दाद शहर में ज्योतिष बतानेवाला कोई और नाई भी है? क्या तू ही मेरे भाग्य में लिखा था!" कमर ने पूछा।

"ज्योतिष की क्या बात हुजूर! मैं रसायन, गणित, वास्तुकला, तर्क, व्याकरण कुरान....मैं सब जानता हूँ। फिर मेरे अनुभव और उम्र का भी ख्याल रखिये।" नाई ने कहा।

कमर और अधिक न बर्दाश्त कर सका। नाई को उसने पैसे देते हुए कहा—"न मुझे तू चाहिये, न तेरी हज़ामत ही। यह पैसा लेकर जा चला जा।" उसने कहा।

"आप फ़िज़ूल पैसा देंगे तो क्या मैं लूँगा? मैं तो केवल आपकी सेवा करना चाहता हूँ। पैसे न भी दें तो कोई बात नहीं। मैंने आपके पिता जी की बहुत सेवा की। वे मेरी सलाह के बग़ैर कुछ न करते थे, आप उनके लड़के ही तो हैं न!" नाई ने कहा।

कमर ऊबकर, नाई को, नौकरों से बाहर निकलवाना ही चाहता था कि वह दाढ़ी में पानी लगाकर, हजामत बनाने लगा। पर उसकी ज़बान चलती जाती थी। किन किन मन्त्रियों की, किन किन महा कवियों की उसने हज़ामत की थी, और कैसे उन्होंने उसकी प्रशंसा की थी, वह सब सुनाने लगा। आख़िर उसने पूछा—"आप ज़रा जल्दी में लगते हैं, क्या बात है!"

"मैं एक मित्र के घर दावत के लिए जा रहा हूँ।" कमर ने उससे कहा।

"आप मुझे भी साथ आने दीजिये। अच्छा ही है।" नाई ने कहा।

"मैं जिस जगह जा रहा हूँ, वहाँ और कोई नहीं आ सकता।" कमर ने कहा।

"वह....मैं सब जान गया; यानी कोई स्त्री-मित्र है। देखिये बाबू! मेरे साथ रहने से आपका भला ही होगा। स्त्रियों से बातचीत करने में बड़ा ख़तरा है। मैंने दुनियाँ देखी है! मैं आप पर कोई आपत्ति नहीं आने दूँगा।" नाई ने कहा।

"छी! कर ज़बान बन्द। अपना काम कर।" कमर ने कहा।

नाई ने अपना काम पूरा किया था कि नमाज़ भी शुरू हो गई। नाई को भेजकर जल्दी जल्दी कपड़े पहिनकर वह काज़ी के घर की ओर दौड़ा; क्योंकि पहिले ही देरी हो गई थी। काज़ी के घर का दरवाज़ा खुला हुआ था। कमर दरवाज़ा खोलकर ऊपर की मंज़िल पर जा ही रहा था कि काज़ी मस्ज़िद से वापिस आ गया।

परन्तु नाई ने कमर को न छोड़ा। वह चला तो गया, पर लुका-छुपा वह कमर के पीछे पीछे काज़ी के घर तक आया और उसके घर के सामने बैठ गया। कमर के अन्दर जाने के बाद काज़ी को आता देख, उसने सोचा—"अब हुज़ूर, अच्छी आफ़त में फँसे हैं।"

दुर्भाग्य से काज़ी को, घर आते ही एक गुलाम स्त्री पर गुस्सा आया। उसने उसको मारा भी। वह गला फाड़कर रोने लगी। एक गुलाम उसे बचाने आया, काज़ी ने उसे भी खूब पीटा। यह सब नाई बाहर बैठा सुन रहा था। उसने समझा कि काज़ी, कमर की हड्डी-पसली एक कर रहा था। वह तुरत चिल्लाने लगा—"बचाओ.... बचाओ....काज़ी मेरे मालिक को मार रहा

है।" पाँच-दस आदमी इकट्ठे हो गये। "क्या बात है?"—उन्होंने पूछा।

शोर सुन कर, काज़ी बाहर आया। उसने पूछा—"मेरे घर के सामने यह होहल्ला क्या कर रखा है?"

नाई ने आगे बढ़कर कहा—"मेरा मालिक आपकी लड़की से मिलने आया है, वह सन्देह कर—क्या आपने मेरे मालिक को नहीं मारा है?"

"मेरी लड़की? और तुम्हारे मालिक का मिलना? कहीं तेरी अक़्ल तो नहीं मारी गई है?" काज़ी ने पूछा।

"आप भी क्या कह रहे हैं? मैंने उन्हें अपनी आँखों से आपके मकान में घुसते देखा है।" नाई ने कहा।

तुरत काज़ी ने, अपना सारा घर ढुँढ़वाया। उपरली मंज़िल पर कमर, काज़ी की लड़की से मिल भी न पाया था कि इस बीच यह होहल्ला शुरु हो गया। वह एक कमरे में, एक खाली सन्दूक में छुपकर बैठ गया। औरों के साथ, नाई ने भी सारा मकान खोजा। जब उसकी नज़र उस सन्दूक पर पड़ी, जिसमें कमर छुपा हुआ था, वह सब ताड़ गया। वह सिर पर सन्दूक रख कर बाहर कूदा। वह बाहर जा रहा था कि उसे ठोकर लगी, वह नीचे गिर गया, साथ सन्दूक भी गिरा। सन्दूक में छुपे कमर का पैर टूट गया।

उसके सन्दूक से बाहर आते ही भीड़ ने उसे घेरना चाहा। कमर जेब में से सोने की मोहरें लेकर बाहर बिखेरना लगा। लोग उसे छोड़कर मुहरों के लिए भागे।

जैसे तैसे मौत से वह बचा। लड़खड़ाता लड़खड़ाता लुका-छुपा वह घर पहुँचा। उसी दिन रात को, बग़दाद शहर छोड़कर कमर कहीं चला गया।

कर्तव्य और काम

एक धोबी के पास एक कुत्ता और एक गधा था। गधा, घर से घाट तक, घाट से घर तक धोबी के कपड़े ढोता। कुत्ता धोबी के घर की रखवाली करता।

एक दिन रात को धोबी के घर एक चोर आया, और कपड़े वगैरह बटोरने लगा। पर उसे देखकर कुत्ता न भौंका।

"चोर आया है, तू चुपचाप क्यों पड़ा है? अपना काम तो कर। ज़ोर से भौंक। मालिक को उठा।" गधे ने कहा।

"मुझे पेट भर खाना नहीं देता, इसलिए मैं नहीं भौंकूँगा।" कुत्ते ने कहा।

इसलिए मालिक को उठाने के लिए गधा रेंकने लगा। धोबी की नींद टूटी। वह बाहर गया। और आते ही एक लकड़ी से गधे को खूब पीटा, क्योंकि उसने उसकी नींद खराब की थी। फिर जाकर चुपचाप सो गया। इस बीच में चोर सब कपड़े चुराकर चला गया।

नाविक सिन्दबाद

उसे नींद कहिये, या बेहोशी। ऐसा लगा, जैसे एक साल गुज़र गया हो। जब मैं फिर उठा तो मुझे धूप और रोशनी दिखाई दी। मुझे बड़ी खुशी हुई। मैं एक बड़े हरे मैदान में लेटा हुआ था। मेरी तमेड़ नदी के किनारे बँधी हुई थी। मेरे चारों ओर इथोपियनों की भीड़ खड़ी थी।

मुझे जागा जानकर, वे मुझसे बातें करने लगे। क्योंकि मैं उनकी भाषा न जानता था, इसलिए मैं उनको जवाब न दे सका। इतने में एक आदमी ने आगे बढ़कर, शुद्ध अरबी भाषा में पूछा—"आप कौन हैं? कहाँ से आये हैं? हमारे देश में आपको क्या काम है? हम लोग किसान हैं। हम जब अपने खेतों में पानी देने आये तो हमने, नदी में बहते हुए तमेड़ पर आपको सोते हुए देखा। हमने तमेड़ को रोका। उसे किनारे पर बाँधा, और आपको यहाँ लाकर लिटा दिया। आप जब तक स्वयं न उठें, तब तक उठाना हमने उचित न

छठवीं समुद्र यात्रा

समझा। इसलिए हम चुपचाप खड़े रह गये। बताइये आप यहाँ कैसे आये?"

"मैं भूख से मरा जा रहा हूँ। पहिले थोड़ा खाने को दीजिये, फिर आप जो चाहेंगे, वह बताऊँगा।" मैंने कहा।

तुरन्त उन्होंने मुझे पेट भर भोजन खिलाया। मेरी जान में जान आई। मैंने उनको अपना किस्सा सुनाया। मेरी कहानी सुनकर, वे आश्चर्यपूर्वक आपस में बातें करने लगे। जिस व्यक्ति ने मेरी बातों का अनुवाद किया था, उसी ने उनकी बातों का मेरे लिए अनुवाद किया। उन्होंने मुझे राजा के पास ले जाने की सोची, ताकि मैं उसे अपनी कहानी सुना सकूँ। मैं भी उनके निश्चय से सहमत था। वे तमेड़ और उस पर रखी धन-सम्पदा को ढोकर मुझे राजा के पास ले गये।

राजा ने सादर मेरा स्वागत किया। उनके आदेश पर, मैंने विस्तारपूर्वक अपनी कहानी सुनाई। मैंने जीते जी, मुसीबतों से निकला था, इसलिए वह बहुत खुश हुआ, उसने मुझे बधाई दी। मैंने थैलियाँ खोलकर उसे दिखाया कि मैंने मुसीबतों को झेलकर क्या पाया था।
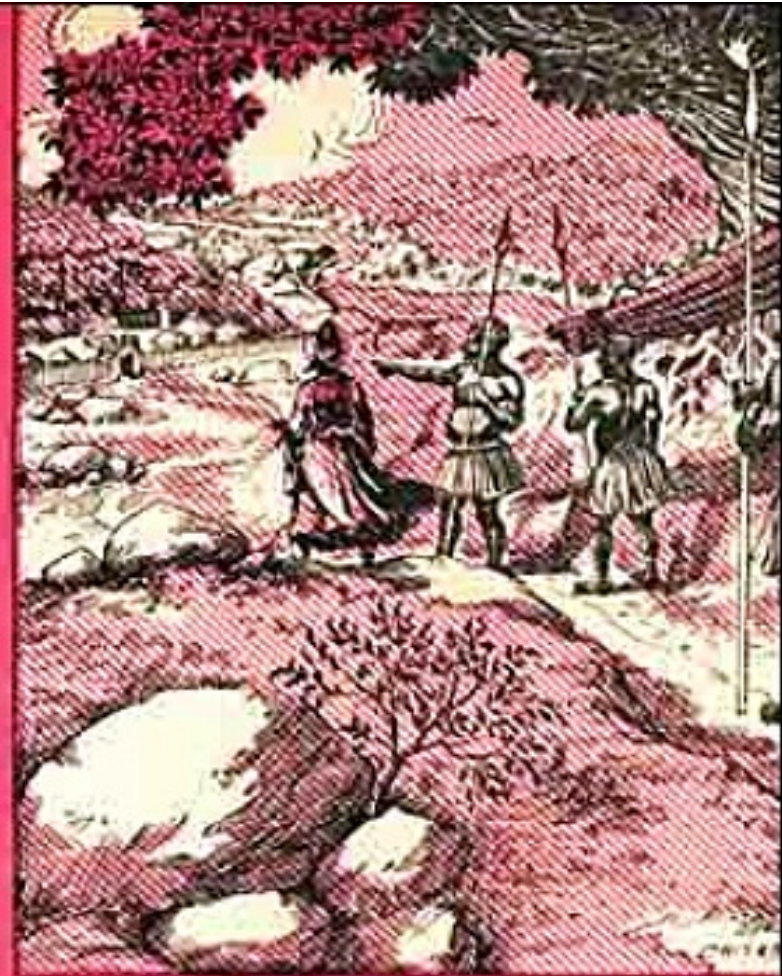
मेरे लाये मोती, हीरों को देखकर राजा बहुत सन्तुष्ट हुआ। वह मोती-हीरों का मशहूर पारखी था। मैंने एक एक तरह की एक एक मोती उसको भेंट में दी। इसके बदले में उसने मेरा बहुत आदर-सत्कार किया और अपने राज-महल में ही मुझे अतिथि के रूप में रखा। इस तरह मैं राजा और उसके सामन्तों का स्नेह प्राप्त कर सका।

उन सब ने मेरे देश और बगदाद के शासन के बारे में कई प्रश्न किये। मैंने खलीफ़ा हरून अल रशीद की खूब प्रशंसा
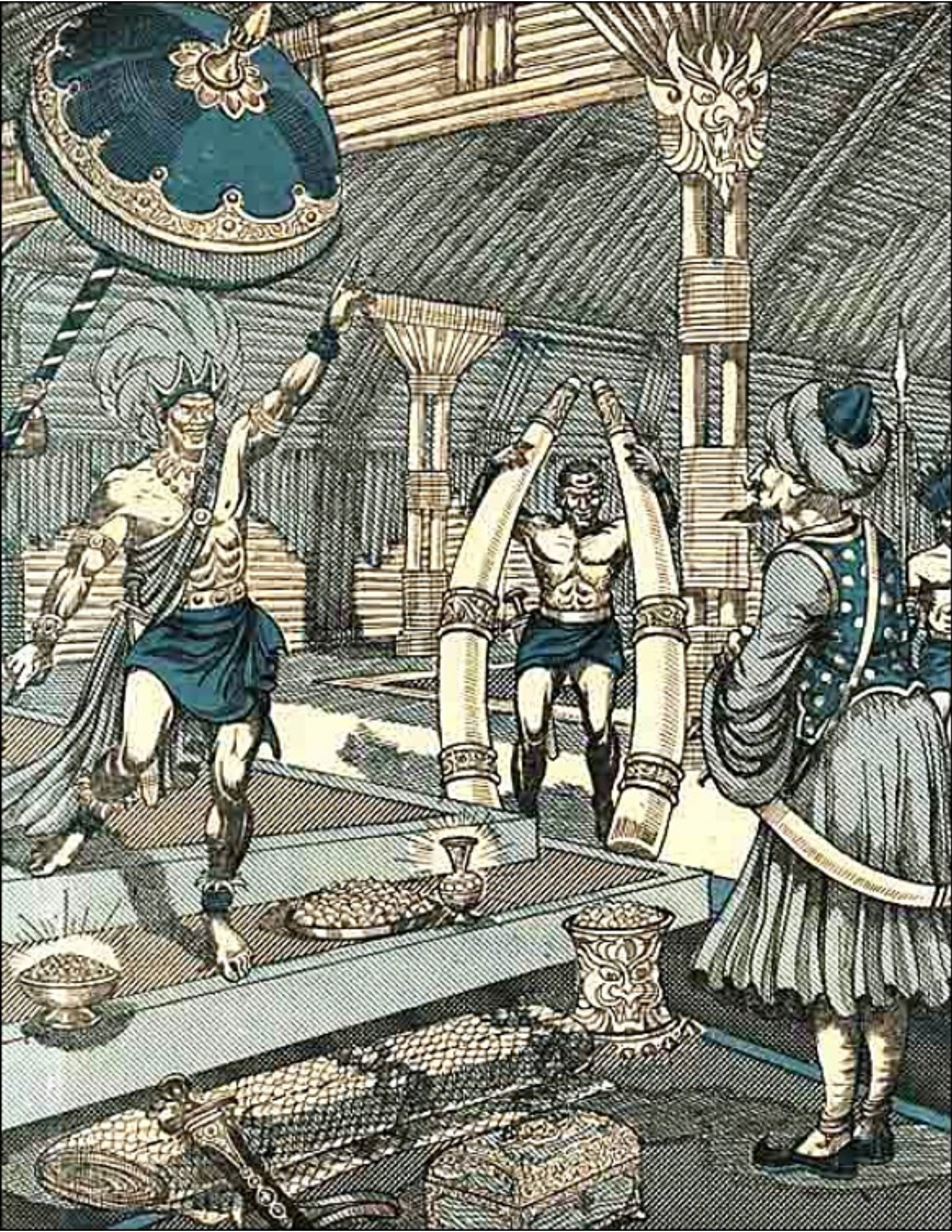
की। सब सुनकर राजा ने कहा—"यह साफ़ ज़ाहिर है कि तुम्हारे खलीफ़ा बहुत योग्य हैं। उनके प्रति मुझे स्नेह हो रहा है। इसलिए तुम्हारे द्वारा मैं उनको उपहार भेजने की सोच रहा हूँ। क्या तुम उन्हें ले जाओगे?"

"दीजिये। ज़रूर उनके पास ले जाऊँगा। यही नहीं, उनसे यह भी कहूँगा कि आप स्नेह के पात्र हैं, और वे भी आपसे स्नेह-सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं।"

तुरन्त राजा ने खलीफ़ा को भेजने के लिए उपहार मँगवाये। उनमें लाल मणियों से जड़ी एक सुराई थी, जो एक अंगुल मोटी थी, और छः फ़ीट बड़ी। उसके अन्दर सुपारी के बराबर मणियाँ थीं। एक कालीन भी दी, जो सांप के चर्म से बनी हुई थी। उस कालीन की विशेषता यह थी कि उस पर रोगियों के लेटने से उनका रोग दूर हो जाता था और वे स्वस्थ हो जाते थे। उन्होंने दो सौ बड़े बड़े कपूर के गोले भी दिये। इनके अलावा दो बड़े बड़े हाथी के दान्त दिये। और तो और जेवर-जवाहरातों से, सजी एक दासी भी दी।

खलीफ़ा के लिए एक पत्र देते हुए राजा ने कहा—"बहुत कम उपहार भेज रहा हूँ। इस कारण तुम अपने खलीफ़ा से, मेरी तरफ़ से माफ़ी माँगो। यह भी कहो कि मैं उनको कितना पसन्द करता हूँ। परन्तु सिन्दबाद! मुझे खुशी होती, अगर तुम यहीं रह जाते। मैं ज़िन्दगी भर तुम्हें किसी प्रकार की कमी न होने दूँगा। ये उपहार मैं किसी और के हाथ भेज दूँगा। क्यों, यहीं रहोगे? बताओ!"

"मुझे माफ़ कीजिये महाराज! जल्दी ही, बसरा के लिए जहाज़ छूटनेवाला है।

मैं अपना देश, बाल-बच्चे, सम्बन्धियों को देखने के लिए बहुत व्याकुल हूँ। मुझे जाने दीजिए। मैं कभी आपका उपकार न भूलूँगा।" मैंने कहा।

राजा मुझे जबर्दस्ती वहाँ रखना न चाहता था। इसलिए उसने जहाज़ के कप्तान और मुसाफिरों को बुलाकर मेरी देखभाल करने के लिए कहा। उसने मेरा जाने का खर्च भी दिया। कितने ही उपहार देकर मुझे विदा किया। वे उपहार अब भी मेरे पास हैं।

मैं राजा और मित्रों से विदा लेकर, अलाह की मेहरबानी से सीधे बसरा गया और वहाँ से बग़दाद पहुँचा। जहाज़ से उतरते ही, मैं राज-महल गया। खलीफ़ा से मिला और उन्हें सलाम करके, राजा का पत्र उन्हें दिया।

खलीफ़ा ने मेरा दिया हुआ पत्र पढ़ा। उपहारों को जाँचा और उन्होंने पूछा—"जिस राजा ने ये उपहार भेजे हैं, क्या वह सचमुच बहुत धनी है!"

"हुज़ूर, इसमें कोई सन्देह नहीं है। वह धनी ही नहीं, बहुत कार्य-कुशल और न्यायशील भी है। उनके राज्य में प्रजा इतनी खुश है कि प्रजा और राजा में कोई फ़ासला नहीं है, झगड़ा नहीं है। वह वस्तुतः हमारे स्नेह का पात्र है।" मैंने जवाब दिया।

खलीफ़ा ने भी मुझे बहुत-से इनाम दिये। कई अधिकार दिये और अपने दरबार के मुन्शी को बुलाकर मेरे अनुभव भी लिखाये। उसने आज्ञा दी कि मेरी कथाओं को देश के इतिहास में सम्मिलित किया जाये।

फिर मैं अपने घर गया, अपने बन्धु-मित्रों से मिला और आराम से, सुख पूर्वक ज़िन्दगी बसर करने लगा।

श्री - स्वप्नदा

दण्डकारण्य का एक भाग, बहुत पहिले, कुम्भक वन नाम से भी जाना जाता था। लोगों में यह अफ़वाह फैली हुई थी कि कुम्भक नाम का राक्षस जंगल में, कहीं भूमि में एक बड़ा क़िला बनाकर रहा करता था। परन्तु किसी ने उस राक्षस को नहीं देखा था, न उसने किसी को सताया था। यही नहीं, जो लोग उस प्रान्त में रहा करते थे, उनका हमेशा कोई न कोई भला होता रहता। किसी को सोना मिलता, तो किसी को ईन्धन इकट्ठा करते करते चन्दन की लकड़ियाँ मिलतीं। कई को जेवर-जवाहरात की थैलियाँ मिलतीं। यह सब कुम्भक की ही कृपा थी, यह वहाँ के लोगों की धारणा थी।

उस वन में इधर उधर झोंपड़ियाँ बनाकर, गरीब रहा करते थे। उनको कई आवश्यक चीज़ें, वन में ही मिल जाती थीं। जो लोग मेहनत कर सकते थे, उनकी ज़िन्दगी आराम से कट रही थी। जंगल में रहनेवालों को कभी कभी विचित्र आदमी दिखाई दिया करते। वे आदमी जंगल के रहनेवाले न थे। पर जो कोई उनसे मिलता था, बातें करता, उनका अवश्य लाभ होता। इस तरह दिखाई देनेवाला मनुष्य, लोगों का ख्याल था, कुम्भक ही था।

उस कुम्भक वन में, कर्दम नाम का एक गरीब अपनी पत्नी, और एक वर्ष के लड़के के साथ एक झोंपड़ी बनाकर रहा करता था। उसकी पत्नी का नाम रेवती था, लड़के का नाम गोपाल। कर्दम की उम्र पचीस वर्ष की थी। हट्टा-कट्टा था। वह रोज़ जंगल में जाता, ईन्धन इकट्ठा करता और उसे बेचकर परिवार

श्री भीमसेन पाण्डेय

का पालन-पोषण करता। खाने-पीने की चीज़ें उसे जंगल में ही मिल जाती थीं। वह अपनी पत्नी और बच्चे को बहुत प्यार करता था। हर रोज़ काम करने के बाद, वह पत्नी के लिए, जंगली फूल, और झील से कमल के फूल ले आता। एक दिन शाम को रेवती रसोई कर रही थी। कर्दम का घर आने का समय न हुआ था।

"ज़िन्दगी मौज़ में गुज़र रही है, पर पति के लिए इतना परिश्रम करना अच्छा नहीं है, तिस पर यह सरदी का मौसम है। अन्धेरा हो जाता है और वह घर काँपता काँपता आता है। अगर हमारे पास रुपया होता तो हमें ये मुसीबतें न झेलनी पड़तीं।" रेवती ने सोचा। उसे चूल्हे में जलते अंगारे सोने के टुकड़े-से लगे। "ये सचमुच सोने के टुकड़े हों तो क्या अच्छा हो।" उसने सोचा।

ठीक उसी समय किवाड़ खटखटाने की आवाज़-सी हुई। उसने सोचा कि उसका पति समय से पहिले ही वापिस आ गया है। उसने जाकर किवाड़ खोला।

बाहर एक बूढ़ा खड़ा था। उसने कन्धे पर एक बोरी में कोई भारी चीज़ रख रखी

थी। उसे सरदी के कारण काँपता देखकर रेवती ने उससे पूछा—"कौन हो बाबा! अन्दर आओ।"

"बड़ी भली हो बेटी। तुमने बड़े पुण्य किये हैं। क्या थोड़ी देर आग के पास हाथ सेंकने दोगे? मैं फिर अपने रास्ते चला जाऊँगा। ठण्ड के कारण हड्डियाँ भी ऐंठ गई हैं।" बूढ़े ने कहा।

बूढ़े के अन्दर आने के बाद रेवती ने किवाड़ बन्द कर दिये। फिर उसने टोकरे में से शाक-सब्जी निकाली। बूढ़े के लिए भी रसोई करने लगी। बूढ़े ने चूल्हे के पास जाकर पूछा—"क्यों बेटी अच्छी तरह गुज़र हो रही है न!"

"हाँ हाँ, हो रही है। इस जंगल में हमें सब चीज़ें मिलती हैं!" रेवती ने कहा।

थोड़ी देर हो गई। खाना पककर तैयार होने को था। पति के आने का समय कभी का हो चुका था। उसको न आता देख, वह सोच रही थी कि उसकी देरी का क्या कारण हो सकता है?

जैसे वह उसके मन की बात सुन रहा हो, बूढ़े ने पूछा—"क्या कर्दम रोज़ इतनी देर करके आता है!" उसने पूछा।

जल्दी भोजन परोसो।" दोनों के भोजन करने के बाद, बूढ़े ने रेवती से कहा—"आज तुम्हारी मेहरबानी से पेट भर गया। क्या अब मुझे जाने की इज़ाज़त दोगी?"

तुरत कर्दम ने कहा—"इतनी देर हो गई है। अब जंगल में कहाँ अकेले जाओगे बाबा? आज यहीं ठहर जाओ। बड़ी ठंड पड़ रही है बाहर।"

"हाँ बाबा! कल सवेरे उठकर चले जाना। चटाई बिछाती हूँ कम्बल भी दूँगी, आराम से सो जाना" रेवती ने कहा।

बूढ़ा वहाँ रहने के लिए मान गया। रेवती ने बच्चे को खिलाकर, स्वयं भोजन किया। बूढ़ा, झोंपड़े के एक कोने में लेट गया और नाक बजाने लगा। दूसरी तरफ़ कर्दम, रेवती और उनका लड़का लेटे हुए थे।

अन्धेरे में पति को हँसता सुन, रेवती ने पूछा—"क्यों हँस रहे हो?"

देख! इस कुम्भक पर भी क्या नौबत आई है! भूमि में उसका एक बड़ा क़िला है, कितने ही नौकर-चाकर हैं। पर आज यहाँ आया, हमारा दिया हुआ रूखा सूखा भोजन किया, फटा-पुराना कम्बल

रेवती हैरान हो गई। उसने पूछा—"क्या तुम उन्हें जानते हो बाबा?

"क्यों नहीं जानती बेटी! जो यहाँ रहते हैं, मैं उन सब को खूब जानता हूँ। तुम्हारे घर की बग़ल से मैं कितनी ही बार गया हूँ।" बूढ़े ने कहा।

रसोई के खतम होने के कुछ देर बाद, कर्दम घर पहुँचा। उसने बूढ़े को नहीं पहिचाना। न उसे देखकर उसे आश्चर्य ही हुआ। उसने पत्नी से पूछा—"लगता है, आज हमारे घर कोई अतिथि आया हुआ है। मुझे बड़ी भूख लग रही है।

ओढ़कर ज़मीन पर सोया हुआ है।" कर्दम ने सोते हुए बूढ़े की ओर देखकर कहा।

रेवती ने डर के कारण काँपते हुए पूछा—"कुम्भक! राक्षस! अगर मुझे यह मालूम होता तो मैं किवाड़ न खोलती।"

"उसका आतिथ्य कर तुमने अच्छा ही किया। वह सचमुच बड़ा भलामानस है। जो कोई उसके साथ अच्छा बर्ताव करता है, वह उसका उपकार करता है। अगर तुम उसे अन्दर नहीं आने देती तो शायद वह हमारा कोई अपकार करता। तुमने उसे भोजन भी खिलाया। इसलिए अब कोई डर नहीं है।" कर्दम ने कहा।

रेवती कुछ सोचती सो गई।

जब वह उठी, तो काफ़ी सवेरा हो चुका था। कर्दम रोज़ सवेरा होने से पहिले ही बाहर चला जाता था। पर उस दिन वह सोता रहा। उसने उसे उठाया "देखो, कितनी देर हो गई है! हम से तो वह बूढ़ा ही अच्छा निकला। वह उठकर भी चला गया है। उसने किसी से कुछ कहा भी नहीं।"

"देखो, बोरी छोड़ गया है। शायद हमारे लिए ही छोड़ गया है। देखें

इसमें क्या है!" कर्दम ने कोने में पड़ी बोरी खींची और उसको खोला।

यकायक रेवती की आँखें चौंधिया गईं। बोरी में हज़ारों चमचमाती मुहरें भरी हुई थीं।

"मैंने कहा था न! वह बूढ़ा कुम्भक ही है! और किसके पास होगा इतना सोना! अगर किसी को मालूम हो गया कि हमारे पास इतना सोना है, तो ख़तरा है। इसलिए खर्च के लिए सौ मुहरें रख लो, बाकी सब पेड़ के नीचे गाड़ देंगे।" कर्दन ने पत्नी से कहा।

पति-पत्नी ने मिलकर, मुहरोंवाली बोरी घर के सामनेवाले पेड़ के नीचे गाड़ दी। कर्दम उस दिन जंगल न गया। कुछ मुहरें लेकर शहर की ओर गया।

रेवती तब बड़ी खुश थी। अब उसके पति को मेहनत करने की ज़रूरत न थी। भले ही कितना खर्च करे, पर इतना धन था कि वह कभी कम न हो सकता था। अगर कर्दम समय पर न आता तो उसको यह देख डरने की जरूरत न थी कि किसी साँप ने उसे काटा होगा, या कोई पेड़ उस पर गिर पड़ा होगा। वह चौबीसों घंटे घर में रह सकता था।

उसने कितने ही सपने देखे। लकड़ी लेकर, घर और बड़ा करना था। घर के चारों ओर बगीचा लगाना था। बच्चे के लिए खिलौने और कपड़े खरीदने थे। अपने और बच्चे के लिए सोने के गहने बनवाने थे। घर में चान्दी के बर्तनों की ज़रूरत थी।

वह यह सोच रही थी कि कर्दम गाड़ी में वापिस आया। गाड़ी में घरबार की चीज़ें भरी हुई थीं। उन चीज़ों को देखकर रेवती बड़ी खुश हुई।
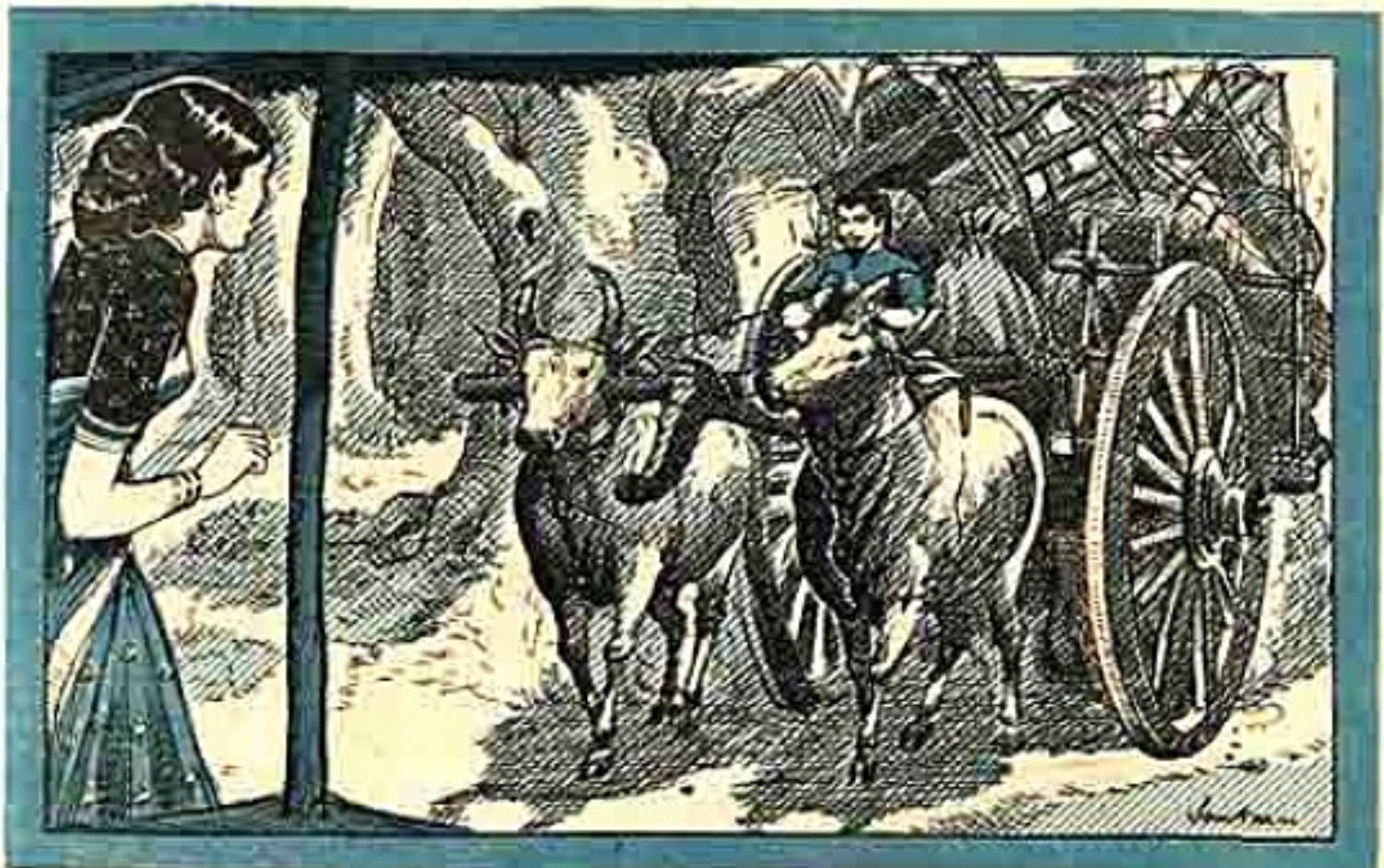
"मैंने गाड़ी भी खरीद ली है। शहर जाने के लिए गाड़ी तो चाहिए ही। इतना रुपया रखकर उतनी दूर कौन पैदल जाएगा?" कर्दम ने कहा। उसके हाव-भाव से लगता था कि शहर में वह खूब पीकर आया था।

"जितना पैसा ले गया था, क्या वह सब खतम हो गया है? या कुछ बाकी रह गया है?" रेवती ने पूछा।

"खतम हो गया हो तो क्या और नहीं है?" कर्दम ने पूछा।

"अगर हो भी तो क्या रुपया-पैसा इस तरह बरबाद किया जाता है?" रेवती ने पूछा।

"मुझ से पूछनेवाली तू कौन होती है? मेरी मर्ज़ी। अगर चाहूँ तो सारी मुहरें आज ही खर्च कर दूँगा।" कर्दम ने उससे कहा।

रेवती को, पति ने कभी डाँटा-डपटा न था। उसे बिगड़ा हुआ देखकर वह बहुत दुखी हुई। परन्तु उसके साथ तू तू मैं मैं करना उसने अपनी ही ग़ल्ती समझी।

तब से रोज़ कर्दम, पेड़ के नीचे गड़े धन में से जितना धन चाहता उतना लेता। गाड़ी में शहर जाता।

चीज़ें खरीदता; खूब शराब पीकर घर वापिस आता।

चीज़ों के रखने के लिए जगह न थी। झोंपड़ी में बैठने की भी जगह न थी। कितनी ही वस्तुएँ झोंपड़ी के बाहर रख दी गई थीं। वे धूप-पानी में खराब हो रही थीं। अगर रेवती कुछ कहती-सुनती भी तो कर्दम उसे बुरी तरह पीटता।

जैसे जैसे ऐश्वर्य बढ़ता गया, वैसे वैसे रेवती का सुख भी कम होता गया। अब कर्दम को, न पत्नी पर प्रेम था, न बच्चे पर ही। उसका दिल हमेशा शराब पर रहता। नहीं तो सोने पर। वह रोज़ चीज़ें इस तरह खरीदता, जैसे वह इस फ़िक्र में हो कि वह पैसा जितनी जल्दी समाप्त हो उतना ही अच्छा है।

"हम तो इससे पहिले ही अच्छे थे।" रेवती ने सोचा। उसने सोचा, अगर उसने उसे न रोका-टोका तो जल्दी ही सारा धन काफ़ूर हो जायेगा। वह उससे झगड़ी।

"सच पूछा जाये तो यह धन तेरा नहीं है। वह बूढ़ा, यह धन मेरे लिए ही छोड़ गया था। कितनी ही चीज़ें खरीद रहे हो, पर मेरे लायक कोई भी चीज़ नहीं है। सब से अधिक हमें एक बड़े घर की ज़रूरत है।" रेवती ने अपने पति से कहा।

"अगर तू कुछ चाहती है तो मुझ से क्यों नहीं कहती? तेरे हाथ में सोना दूँ तो तू जानती नहीं कि उसे कैसा खर्चा जाये।" कर्दम ने कहा। वह शहर जाकर, राज, बढ़ई वगैरह को बुला लाया और एक बड़ा घर बनवाने लगा। दिन बीतते गये। पर वह मकान पूरा होता नज़र न आया। और इस बीच सोना भी खतम होने को हुआ।

जब कर्दम घर में न था। रेवती ने एक काम करनेवाले को बुलाकर कहा— "इस पेड़ के नीचे खोदो।" बहुत खोदने के बाद, उसे वह बोरी मिली। उसमें बहुत कम मोहरें ही रह गई थीं।

"सिर्फ़ इतनी ही!" रेवती ने बोरी देखकर, विस्मित स्वर में कहा। जिसका उसे भय था, वही हुआ। सोना समाप्त हो गया था। सोना ही ख़तम हो जाता तो ऐसी कोई बड़ी बात न थी। उससे भयंकर घटना एक और घटी। उस दिन शाम को पति के लिए राजा के सैनिक आये। उस समय कर्दम खूब शराब पीकर, नशे में चूर पड़ा था।

"तुझे एक ख़ज़ाना मिला। तूने राजा को क्यों नहीं इस बारे में सूचित किया? राजा की आज्ञा है कि तुझे हाथ-पैर बाँधकर उनके सामने हाज़िर किया जाये।" राजा के सैनिकों ने कहा।

"हाथ बाँधोगे? क्यों?" कर्दम कुल्हाड़ी लेकर उन पर लपका। राजा के सैनिकों ने उसको छुरी से मारा। रेवती यह सब देखकर घबरा गयी और ज़ोर से चिल्ला उठी। वह सहसा बेहोश गिर गई।

उस बेहोशी में उसको ऐसा लगा, जैसे उसे कोई बुला रहा हो। उसने आँखें खोल कर देखा।

"रेवती, रेवती!" कर्दम ही उसे बुला रहा था। तभी सबेरा हो रहा था। कोने में बूढ़ा कम्बल ओढ़कर सो रहा था। वहाँ और कोई न था।

"क्यों, क्यों रो रही हो? कोई ख़राब सपना तो नहीं आया था?" कर्दम ने उसकी ओर देखकर हँसते हुए पूछा।

जब रेवती ने अपने पति को पहिले की तरह देखा, तो उसकी खुशी का ठिकाना

न रहा। "हाँ, बड़ा बुरा सपना आया है।" पति-पत्नी, बातें कर रहे थे कि बूढ़ा भी उठ बैठा।

"सूर्योदय होनेवाला है। मुझे जाना है। मुझे थोड़ा माँड़ पीने को दो।" कर्दम ने कहा।

"अच्छा बेटी! तो मैं भी जाता हूँ।" बूढ़े ने कहा।

"ठहर बाबा! तुम्हें भी थोड़ा माँड़ देती हूँ। जाने कितनी दूर जाओगे और कहाँ क्या खाओगे!" रेवती ने कहा।

"नहीं, पहिले ही देरी हो गयी है!" कहता हुआ बूढ़ा चला गया।

"बाबा! तुम अपनी गठरी यहीं छोड़ कर जा रहे हो।" कर्दम चिल्लाया।

"वह भी क्यों बेटा, फ़िज़ूल का बोझ है। अगर उसमें तुम्हारे लायक चीज़ हो तो ले लेना।" बूढ़े ने कहा।

"क्या मैंने न कहा था, यह तेरे लिए इनाम है।" कर्दम ने रेवती को देखकर हँसते हुए कहा।

उसने घबराकर कहा—"मुझे कुछ नहीं चाहिये। इसे बाबा को ही दे दो।"

कर्दम ने, कोने में पड़ी बोरी को उठाकर कहा—"अरे, बाप रे बाप! कितना भारी है! शायद सोना है!"

"नहीं, नहीं! जो कुछ हमारे पास है, वह काफ़ी है। दौड़ कर जाओ बाबा को जाकर उसकी बोरी दे आओ।" रेवती ने और घबराते हुए कहा।

"अच्छा, जैसी तेरी मर्ज़ी।" कहकर बोरी लेकर कर्दम बाहर दौड़ा। रेवती को ऐसा लगा, जैसे उसके मन पर से किसी ने बहुत बड़ा बोझ उतार दिया हो। उसने अच्छी तरह जान लिया कि अनावश्यक श्री-सम्पदा से दुख ही दुख हैं, सुख नहीं।
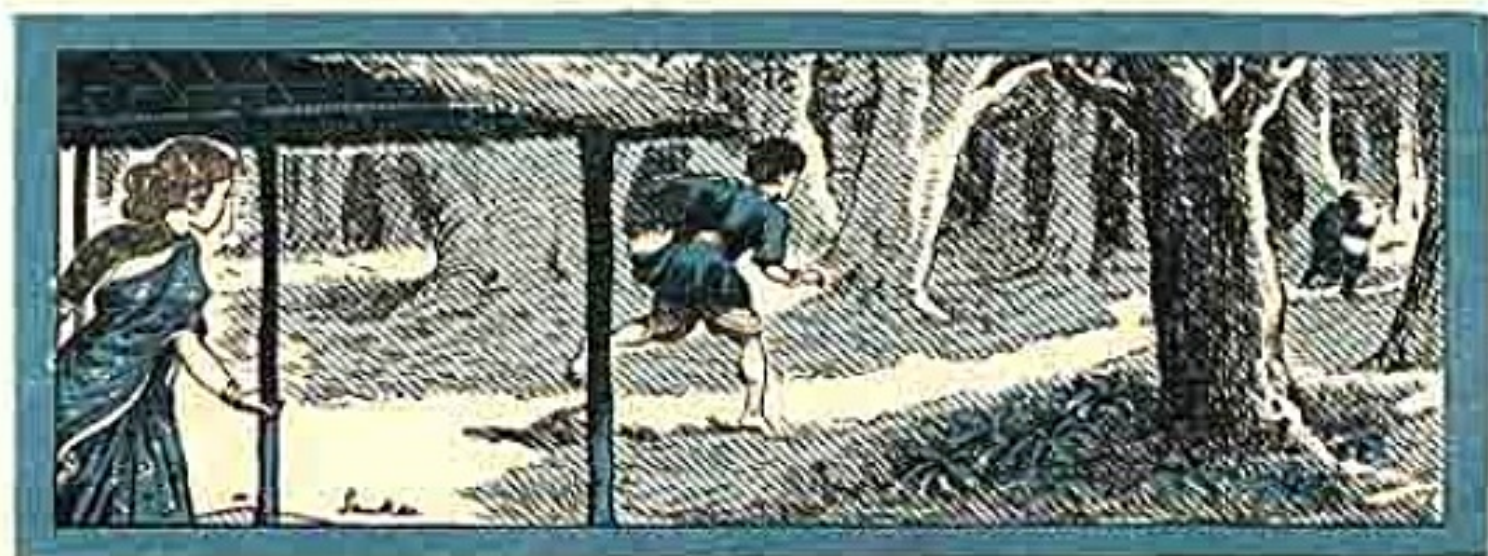
[९]

[भुवन-सुन्दरी को लेकर प्रारम्भ हुआ ग्रीक-ट्रोजन युद्ध आखिरी दशा में था। दोनों तरफ़ के अच्छे योद्धाओं की मृत्यु हो चुकी थी। ट्रोय के पतन के लिये रूपधर ने एक चाल सोची। इस चाल के अनुसार एक काठ का घोड़ा बनाया गया। और उसके पेट में योद्धाओं को बिठाया गया। घोड़े और चोर्यन्थ को समुद्र तट पर छोड़ कर, ग्रीक सैनिकों ने यह दिखाया, जैसे वे मैदान छोड़ कर चले गये हों। ट्रोजन उस घोड़े को नगर के अन्दर ले जाकर विजयोत्सव मनाने लगे।

बाहर शोर-शराबा हो रहा था और काठ के घोड़े के अन्दर ग्रीक योद्धा जान हथेली में लेकर बैठे थे। दोर्दण्ड तो घुट-घुटकर रोने भी लगा। केवल नवयोध ही, पत्थर की तरह बैठा था। तीक्ष्ण दृष्टि का फेंका हुआ भाला घोड़े को बींधकर, उसके सिर के पास लगा था। पर वह न हिला। और तो और वह इस उम्मीद में बैठा था कि कब वह घोड़े से बाहर निकलता है और कब अपना पराक्रम दिखलाता है। वह रह रह कर रूपधर की ओर देख रहा था। इस हमले का रूपधर ही नेता था।

शाम को, भुवन-सुन्दरी अपने पति अरिभयंकर के साथ काठ का घोड़ा देखने आई। उसका मन बहलाने के बहाने,

वह घोड़े के चारों ओर घूमी, जगह जगह उसको ठोंककर देखा और घोड़े में छुपे योद्धाओं की पत्नियों की आवाज़ की उसने नक़ल की। उनका नाम लेकर उन्हें बुलाया। काठ के घोड़े के पेट में, रूपधर के पास बैठे, प्रताप और देवमय भी, अपने नामों के लिये जाने पर बाहर कूदने को तैयार हुए। परन्तु रूपधर ने उन्हें रोका।

रात हुई। दिन भर के विजयोत्सव से थके-माँदे, ट्रोयवासी गाढ़ी निद्रा सो रहे थे। कहीं कोई कुत्ता तक नहीं भौंक रहा था। केवल भुवन-सुन्दरी न सोई थी। उसके कमरे के बाहर, एक गोलाकार दीप था, जो ग्रीक योद्धाओं के लिए संकेत था।

आधी रात हुई। चन्द्रोदय होने को था। उस समय चौर्यनाथ बिल्ली की तरह शहर पार कर गया। उसने वज्रकाय की समाधि पर एक ज्योति जलाई। उसी समय प्रत्याम्ना ने—समुद्र में खड़े जहाज़ों को, एक बड़ी जलती मशाल घुमाकर इशारा किया।

इस संकेत के उत्तर में राजा ने अपने जहाज़ों में रोशनी करवाई। ग्रीक जहाज़ किनारे की ओर जल्दी जल्दी आने लगे।

राजा का संकेत पाते ही प्रत्याम्ना ने काठ के घोड़े के पास जाकर कहा—"सब तैयार है।" तुरत रूपधर ने दौर्दण्ड से कहा—"घोड़े का दरवाज़ा खोल दो।"

घोड़े के पेट में दरवाज़ा खुल गया। एक योद्धा बाहर कूदा। उसकी गरदन टूट गई और वह वहीं ठंडा हो गया।

फिर ताड़ के पेड़ की सीढ़ी उतारी गई। ग्रीक योद्धा एक एक करके चुपचाप नीचे उतरे। उनमें से कुछ जहाज़ों से उतरकर आनेवाले सैनिकों के लिए, क़िले के फाटक खोलने दौड़े और कुछ ने राजमहल के ऊँघते पहरेदार को जाकर मार दिया।

प्रताप के मन में सिवाय, अपनी पत्नी भुवन-सुन्दरी के, और कुछ न था। वह भुवन-सुन्दरी के घर की ओर भागा।

फिर भयंकर हत्याकांड शुरू हुआ। चान्दनी में ग्रीक योद्धा गलियों में घूम-घूम कर लोगों को मारने लगे।

यद्यपि रूपधर ने, भुवन-सुन्दरी और उसकी सास को, निशस्त्र व्यक्तियों को न मारने का वचन दिया था, तो भी ग्रीक

योद्धाओं ने उस वचन का पालन न किया। वे हर घर में घुसे। उन्होंने सोते हुए वृद्ध, स्त्री, पुरुषों के गले काट डाले।

वर्धन, उसकी पत्नी और लड़कियाँ एक मन्दिर में जा छुपीं। वर्धन ने ग्रीक योद्धाओं से युद्ध करना चाहा। परन्तु उसकी पत्नी ने कहा—"तुम बूढ़े हो गये हो; अब जाकर क्या युद्ध करोगे? जान बची रहे, यही काफी है।"

वर्धन ने पत्नी की बात सुनी। तभी उसने ग्रीक योद्धाओं को अपने लड़के का पीछा करते हुए देखा। और उसके देखते देखते उसको नवयोध ने तलवार से मार भी दिया। यह देख वर्धन हाथ पर हाथ धरे न बैठा रह सका। वह मन्दिर से बाहर निकला। वह ग्रीक योद्धाओं के हाथ में पड़ गया। ग्रीक योद्धा उसको राजमहल के फाटक के पास ले गये और उसको वहीं मार दिया।

भुवन-सुन्दरी के घर प्रताप के साथ रूपधर भी गया। उन दोनों ने मिलकर अरिभयंकर के साथ बहुत देर तक युद्ध किया। आखिर भुवन-सुन्दरी ने ही, पीछे से अरिभयंकर को छुरी से भोंककर मार दिया।

यद्यपि प्रताप, बहुत दिनों से अपनी पत्नी को मारने की सोच रहा था, पर उसके सौन्दर्य को देखकर उसने अपना इरादा बदल लिया। उसने अपनी तलवार दूर फेंक दी। भुवन-सुन्दरी का हाथ पकड़कर, वह उसे ज ाज़ों की ओर ले गया।

प्रत्याज्ञा ट्रोजन था, तो भी उसने ग्रीक लोगों की मदद की। यह भूलकर कुछ ग्रीक योद्धाओं ने प्रत्याज्ञा के एक लड़के को घायल कर दिया। एक और को मारने के लिये गलियों में उसका वे पीछा कर रहे थे कि उस समय रूपधर ने प्रत्याज्ञा के

लड़कों को केवल बचाया ही नहीं, परन्तु उसके घर के सामने सिंह का चर्म भी लटकवा दिया। यह इसका संकेत था कि कोई उस घर में न आये-जाये।

इसी तरह प्रशंस का घर भी, ग्रीक लोगों के कोप का शिकार न हुआ।

ट्रॉयनगर में, ग्रीक लोगों ने अपना हत्याकांड शुरू ही किया था कि वर्धन की बड़ी लड़की बुद्धिमति देवी के मन्दिर में जा छुपी। परन्तु ग्रीक योद्धा उसको पकड़कर ले गये। हर जीवित ट्रोजन स्त्री को ग्रीक सैनिकों ने पकड़कर रख लिया। राजा ने स्वयं जालिनी को ले लिया।

हत्याकांड के बाद ग्रीक सैनिकों ने ट्रॉय नगर को लूटा, दीवारें तोड़ दीं। घरों में आग लगा दी। देवताओं को बलि दी। जो कुछ लूटा उसे आपस में बाँट लिया।

वीरसिंह की पत्नी, नवयोध के हाथ लगी। उसके एक लड़का था। उसको ग्रीक सैनिकों ने मार दिया।

वज्रकाय की प्रियतमा प्रमोदिनी के भविष्य के बारे में कुछ नोक झोंक हुई। "ट्रॉयनगर के पतन के बाद, प्रमोदिनी को मेरी समाधि पर बलि दे दो" वज्रकाय ने यह इच्छा, मृत्यु से पहिले अपने मित्रों के समक्ष प्रकट की थी। वज्रकाय ने, अपने लड़के को, व अन्य कुछ ग्रीक सैनिकों को, सपने में प्रत्यक्ष हो कर धमकाया था कि यदि प्रमोदिनी को बलि न दिया गया, तो ग्रीक अपने देश वापिस न जा सकेंगे। कार्मुक ने भी कहा कि यदि प्रमोदिनी की वज्रकाय को बलि न दी गई तो अच्छा नहीं होगा; क्योंकि वह उसे बहुत चाहता था। पर राजा प्रमोदिनी की बलि का विरोध

कर रहा था। "पहिले ही काफी रक्तपात हो चुका है। यही नहीं, मृत व्यक्ति की इच्छा को, जीवित व्यक्ति को बलि देकर पूरा करना क्या अच्छा है? यह बहुत ही असंगत मालूम होता है।"

"क्योंकि तुमने जालिनी हथिया ली है, इसलिये तुम उसकी बहिन की प्राण रक्षा करना चाहते हो" इस तरह कई ग्रीक योद्धाओं ने खुल्लमखुल्ला राजा का विरोध किया। यह मतभेद झगड़े में बढ़ गया। अगर बात बढ़ती गई तो ख़तरा सम्भव था, इसलिये रूपधर ने राजा को सलाह दी कि वह औरों की इच्छानुसार ही यह काम होने दे।

प्रमोदिनी को बलि देने का निश्चय किया गया। उसको लाने का काम रूपधर को सौंपा गया। बलि देने के लिए, वज्रकाय का लड़का नवयोध स्वयं तैयार था। ग्रीक सैनिकों के सामने, वज्रकाय की समाधि पर प्रमोदिनी की बलि दी गई। उसके बाद ग्रीक सैनिकों ने शास्त्रोक्त रीति से उसका अन्त्येष्टि संस्कार किया।

प्रमोदिनी के मर जाने के बाद, ग्रीक सैनिकों की वापिसी यात्रा के लिए हवा अनुकूल चलने लगी। ग्रीक सैनिकों का ख्याल था कि प्रमोदिनी की बलि से वज्रकाय की आत्मा को शान्ति प्राप्त हुई थी और उसी की कृपा से अनुकूल हवा चलनी शुरु हुई थी। वे तुरत अपने जहाज़ों में जा बैठे, और स्वदेश के लिए यात्रा शुरू कर दी।

वर्धन की पत्नी रूपधर के हाथ में आई। परन्तु वह ग्रीक सैनिकों के अत्याचार के कारण बहुत बिगड़ी हुई थी और उनको कोस रही थी। ग्रीक सैनिक उसका किसी तरह मुख न बन्द कर सके। इसलिये उन्होंने उसे मार कर समुद्र में फेंक दिया।

वापिसी यात्रा में कई ग्रीक नेता अलग अलग रास्ते पर चले गये। कई तो अपने देश पहुँचे ही नहीं।

ट्रॉय से चलने के बाद, पहिले पहल, राजा और उसके भाई प्रताप में अनबन हुई। "हवा अनुकूल है! चलो तुरत चलें।" प्रताप ने कहा। "बुद्धिमति को बलि दिये बगैर कैसे जाया जाय?" राजा ने पूछा। "बुद्धिमति ने हमारा क्या उपकार किया है कि हम उसको बलि दें? उसने तो शत्रु की ही मदद की है।" प्रताप ने कहा। इस बात पर दोनों में मतभेद हुआ, और दोनों अलग अलग रास्ते पर चले गये। फिर वे अपनी ज़िन्दगी में कभी न मिले।

राजा, नवयोध, वृद्ध नवद्योत सीधे घर पहुँचे। प्रताप के जहाज़ों को अनुकूल हवा न मिली। वे तूफ़ान में फँस गये। कई नौकाएँ डूब भी गईं। जैसे तैसे वह मिश्र पहुँचा। आख़िर जब उसने स्वदेश में पैर रखा तो राजा की किसी ने हत्या कर दी थी।

दिव्यदृष्टि वाला कायक रास्ते में ही मर गया था। बुढ़ापे में देवमय की हत्या की गई।

ट्रॉय नगर के पतन के आख़िरी दिनों में, जिसने युद्ध में विशेष पटुता दिखाई थी, और जो काठ के घोड़े की योजना का निर्माता था, वह रूपधर दस वर्ष बाद स्वदेश पहुँचा।

इस तरह ट्रॉय नगर का पतन हुआ। ग्रीकों के नष्ट करने से पहिले वह संसार में उत्तम नगरों में से एक था। उसके बाद, प्रशंस के वंश वालों ने उसका कई बार निर्माण किया। पर पहिले जैसा वह कभी उन्नत न हो पाया [समाप्त]

लालच का फल

एक राजा का एक किसान मित्र था। जब कभी राजा शिकार खेलने जाता, उसके घर में एक दिन रहता, शकरकन्दी भुनवा कर खाता और अपनी राजधानी वापिस चला जाता।

यद्यपि राजा उसका इतना गहरा मित्र था, तो भी उसने राजा के कारण कोई फ़ायदा नहीं उठाया था।

एक बार किसान को राजधानी जाना पड़ा। किसान की पत्नी ने एक गठरी में शकरकन्दियाँ बाँध कर दीं। उसने कहा—"राजा को शकरकन्दी बहुत पसन्द है। ये ले जाकर उन्हें दे देना।"

"अरी पगली! राजा इस प्रकार के उपहार को देखकर क्या सोचेंगे?"—उस किसान ने अपनी पत्नी से कहा।

"जब तुम इतनी दूर से ले जा रहे हो तो वे ज़रूर खा लेंगे। ले जाओ।"—किसान की पत्नी ने कहा।

किसान ने पत्नी की बात ठुकरानी नहीं चाही। वह गठरी लेकर राजधानी की ओर चला। रास्ते में, गठरी में से छोटी छोटी शकरकन्दियाँ लेकर वह खाता गया। जब वह राजधानी पहुँचा तो गठरी में एक ही शकरकन्दी रह गई थी।

"मैं इसे राजा को दूँगा। उसने कभी इतनी बड़ी शकरकन्दी न देखी होगी।" किसान ने सोचा। राजा के दर्शन के लिए किसान ने राजसभा में झाँक कर देखा। अन्दर दरबार लगा हुआ था। किसान राजा के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

थोड़ी देर में दरबार ख़तम हुआ। राजा ने अपने मित्र से कुशल-क्षेम पूछा।

श्रीमती डी. मंजुलता

किसान ने गठरी में से शकरकन्दी निकाल कर कहा—"आप के लिए लाया हूँ।"

राजा बड़ा खुश हुआ। उसने पास खड़े सैनिक को बुलाकर कहा—"इस उपहार को हमारे खज़ाने में सुरक्षित रखो। खज़ांची से हज़ार मुहरें लेकर इस किसान को इनाम में दो।"

फिर राजा ने किसान की ओर मुड़कर कहा—"आओ, भोजन के लिए चलें।"

सब राज-कर्मचारियों को पता लग गया कि राजा ने न केवल एक ऐरे-गैरे किसान को एक शकरकन्दी के लिए हज़ार मुहरें ही दीं, बल्कि उसको अपने साथ भोजन के लिए भी वे ले गये।

जब राजा उदार है तो क्यों न इसका फ़ायदा उठाया जाये, यह सोच एक उच्च राज-कर्मचारी अगले दिन, एक अच्छी नस्ल का घोड़ा ले गया। उसने उनसे कहा—"राजा! यह अच्छी नस्ल का घोड़ा आपको उपहार में दे रहा हूँ। मेहरबानी बनाये रखिये।"

जब राजा ने एक शकरकन्दी के लिए ही हज़ार मुहरें दी हैं तो न मालूम, इस घोड़े के लिए कितनी मुहरें देगा, वह कर्मचारी मन ही मन सोचने लगा।

यह बात राजा ताड़ गया। उसने सैनिक को बुलाकर कान में कहा—"हमने खज़ाने में रखने के लिए एक शकरकन्दी दी थी, उसे ले आओ।"

सैनिक शकरकन्दी ले आया। राजा ने उसे कर्मचारी को देते हुए कहा—"इस शकरकन्दी का दाम हज़ार मुहरें हैं! तुमने मुझे घोड़ा दिया है, इसलिए मैं तुम्हें यह उपहार में दे रहा हूँ।"

कर्मचारी बड़ा निराश हुआ। पर उसको लालच का अच्छा फल मिला।

मित्र-भेद

"मदोत्कट नामक रहता था
सिंह एक ऊँचा आकार,
साथ सदा रहते थे अनुचर
कौए, चीते और सियार।

एक दिवस जब देखा उसने
ऊँट बड़ा-सा वन में एक,
बोल उठा वह—"यह तो कोई
जन्तु अनोखा जँचता नेक।"

यह सुन बोला कौआ उससे
"ऊँट इसे हैं कहते लोग,
भोजन के है योग्य आपके
मार लगायें अब तो भोग!"

इस पर बोला सिंह तुरत ही—
"नहीं, नहीं, यह होगा पाप!
घर आये का वध करना तो
सबसे बढ़कर जग में पाप।

अलग कारवाँ से हो शायद
आ भटका वन में अनजान,
पास तुरत ले आओ उसको
देता उसे अभय का दान।"

ले आये तब बुला ऊँट को
कौए, चीते और सियार,
कहा शेर ने—"डरो न मुझसे
हो तुम अबसे मेरे यार।

व्यर्थ बोझ ही नित ढोने को
जाओगे क्यों तुम अब गाँव,
रहो सदा सुख से इस वन में
समझो इसको अपना ठाँव!"

हुई ऊँट को बहुत तसल्ली
रहा न मन में भय का वास,
चरने लगा बहुत ही सुख से
वन की कोमल कोमल घास।

कुछ दिन बीते सुख से सबके
फिर आया हाथी इक मस्त,
बहुत देर तक लड़ा शेर से
खुभो गया आखिर में दंत।

श्री 'भारतीभक्त'

सिंह बहुत ही घायल होकर
पड़ा रहा धरती पर मौन,
चल-फिर पाता नहीं ज़रा भी
फ़िकर भूख की करता कौन!

स्वामी के ही साथ जब
हुए भूख से व्याकुल दास,
कहा शेर ने—"मार सकूँ मैं
ऐसा जीव नहीं है पास।"

कहा सियार ने उससे तब यह
"नहीं और चारा है नाथ,
इसी ऊँट को क्यों न मार कर
भूख मिटाएं हम सब साथ?"

गरजा यह सुन शेर ज़ोर से
कहा—"अरे पापी, धिक्कार!
अभयदान देते हैं जिसको
उसका क्या करते संहार?"

सियार बोला—"बुरा न मानें,
नहीं मारने में कुछ पाप,
अगर आपको करे समर्पण
तन वह अपना अपने आप।"

"अच्छा, करो वही जो मर्ज़ी!"
कहकर मौन हुआ तब शेर,
उधर सियार ने कहा ऊँट से
जाकर—"चलो, करो मत देर।

स्वामी हैं बीमार बहुत ही
चलने से बिलकुल लाचार,
वही हमारा रक्षक है, पर
बना भूख से है बेजार!"

जब पहुँचा वह ऊँट गुफ़ा में
तब कौआ बोला हो दीन—
"खालें मुझको ही स्वामी अब
बीते बिन खाये दिन तीन!"

इस पर बोला सियार तत्क्षण—
"नहीं, मुझे ही खा लें आप!"
चीता भी चुप रहा न तब औ'
कहा—"मुझे ही खायें आप!"

लेकिन शेर रहा गुमसुम ही
दिया नहीं कुछ मानों ध्यान,
ऊँट विचारा भोला-भाला
नहीं कुटिलता का था भान।

बोल उठा वह भी आखिर तब—
"क्यों न मुझे ही खाते आप,
अनुचर हूँ मैं, मुझको खाकर
भूख मिटायें जल्दी आप।"

उसके इतना कहते ही बस
दिया उसी को सबने मार,
फिर तो सबने खाया जी-भर
खुश हो मन में बारम्बार।

इसीलिए मैं कहता दमनक
राजा के साथी हैं दुष्ट
झूठी बातें कहकर सारी
किया बहुत मुझसे है रुष्ट।

लेकिन मैं तो नहीं मरूँगा
यों अब कायर की-सी मौत,
युद्ध करूँगा और बरूँगा
आये ही यदि सचमुच मौत।"

दमनक बोला—"ना संजीवक,
नाहक मत खोओ निज जान,
लड़ने से कुछ लाभ नहीं है
शत्रु बहुत तुमसे बलवान।

एक टिटिहरी औ' सागर की
सुनो कथा तुम देकर कान,
फिर तो मेरी बातें सारी
लोगे तुम निश्चय ही मान।

सागर-तट पर एक टिटिहरी
रहता था मादा के साथ,
गर्भवती होने पर उससे
बोली मादा—"प्यारे नाथ,

खोजो ऐसी जगह अभी तुम
जहाँ न लहरों का हो कोप,
जिससे दूँ मैं अंडे अपने
और न उनका होवे लोप।"

हँसा टिटिहरी, बोला उससे—
"तुम भी करती कैसी बात,
मैं पक्षी हूँ, यम भी डरता,
सागर की क्या यहाँ बिसात?

भर रात उठाये रहता हूँ मैं
अपने पैरों पर आकाश,
दो तुम अंडे इस तट पर ही
नहीं करेगा कोई नाश।"

उसके कहने पर मादा ने
दिये वहीं पर अंडे तीन,
लेकिन ज्वार उठा जब भारी
हुए सभी सागर में लीन।

यों पल में ही चूर हो गया
क्षुद्र टिटिहरी का अभिमान,
दुख से व्याकुल रोयी मादा
खोकर अंडे प्राण समान।"

इतना कहकर दमनक आया
फिर से अब करटक के पास,
बोला—"चाल चली है ऐसी
जिससे हो वैरी का नाश।

बुद्धि बड़ी है सबसे जग में
इसकी देता, सुनो, मिसाल—
वज्रदंष्ट्र था शेर उसी के
दास भेड़िया और शृगाल।

एक ऊँटनी के बच्चे को
दिया अभय का उसने दान,
खाता-पीता बड़ा हुआ वह
अंकुश-से थे उसके कान।

घायल शेर हुआ कहीं जब
हाथी से लड़कर इकबार,
भूख उसे थी बहुत सताती
पर था चलने से लाचार।

सियार और उस क्रूर भेड़िये
ने तब ऐसी रच दी चाल,
मारा गया ऊँट ही आखिर
हुए मित्र ही उसके काल।

पर उसको भी खा न सके सब
भगा भेड़िया हो बेहाल,
कर दिया युक्ति से वज्रदंष्ट्र को
कुपित भेड़िये पर शृगाल।

बाद किया मजबूर शेर को
भागा वह भी छोड़ शिकार,
यों पूरा वह मांस खा गया
चालाकी से चतुर सियार!

भेड़िये की मृत्यु

जब भेड़िये की चाल न चल सकी और खरगोश को लोमड़ी न पकड़ सकी तो उसे खरगोश पर बड़ा गुस्सा आया। वह उस से बदला लेने और उसके सारे परिवार को ही नष्ट करने की सोचने लगा।

जब कभी खरगोश बाहर जाता तो भेड़िया उसके घर में घुस जाता और खरगोश के बच्चों को खाकर चला जाता। जब इस प्रकार की घटनाएँ एक-दो बार हुईं तो खरगोश को फ़िक्र होने लगी।

खरगोश ने अपने घर की मरम्मत करवाई। किवाड़ ठीक करवाये। भेड़िया अन्दर न घुस सका। इस तरह भेड़िये का डर ज़रा कम हुआ। खरगोश ने अपने बच्चों के लिए बड़े बड़े लकड़ी के सन्दूक भी बनवाये। उन पर मोटे मोटे ताले भी लगवाये।

भेड़िया भी यह सब जानता था। वह भी जैसे तैसे बदला लेने की ताक में था। सोचते सोचते उसे एक चाल सूझी। वह भाग कर खरगोश के घर गया। और उसके घर का दरवाज़ा खड़खड़ाने लगा।

"कौन है?" खरगोश ने पूछा।

"भाई! मैं भेड़िया हूँ। जल्दी दरवाज़ा खोलो, तुम्हारा भला होगा। शिकारी कुत्ते मेरा पीछा कर रहे हैं।" भेड़िये ने गिड़गिड़ाते हुए कहा।

बच्चों को दूसरे कमरे में रखकर खरगोश ने दरवाज़ा खोला। भेड़िया हाँफता, हाँफता अन्दर आया।

खरगोश ने सन्दूक खोलकर कहा—"इसमें घुस जाओ। शिकारी कुत्तों के चले जाने के बाद बाहर आ जाना।"

श्री सुमनकुमार जोशी

भेड़िये ने सोचा कि उसकी चाल चल गई थी। वह सन्दूक में जा घुसा। खरगोश ने सन्दूक बन्द करके उस पर ताला लगा दिया। फिर उसने अपने बच्चों को बाहर निकाला। बच्चे कमरे में आकर खेलने लगे। भेड़िया चिल्लाया—"भाई ज़रा देखो तो कि कुत्ते गये हैं कि नहीं"

"अभी कुत्ता दरवाज़ा के पास गन्ध सूँघता नज़र आता है।" खरगोश ने अपने बच्चों को उस तरफ़ देखने से मना करते हुए कहा।

खरगोश को इधर उधर घूमता देख, भेड़िये ने पूछा—"क्या कर रहे हो?"

"आग बना रहा हूँ।" खरगोश ने कहा।

"किसलिए भाई?" भेड़िये ने पूछा।

"इसलिये कि थोड़ी-सी चाय तुझे पिला दूँ।" खरगोश ने कहा।

थोड़ी देर बाद भेड़िये ने पूछा—"यह आवाज़ क्या है भाई।"

"पानी उबल रहा है।" खरगोश ने कहा।

थोड़ी देर बाद भेड़िये ने घबराते हुए पूछा—"सन्दूक पर क्या कर रहे हो भाई!"

"तुझे हवा आ सके, इसलिये छेद कर रहा हूँ"—खरगोश ने कहा।

थोड़ी देर बाद भेड़िया दर्द के मारे चिल्लाया—"भाई यह काट क्या रहा है!"

"खटमल होंगे। तुम ज़रा दूसरी तरफ़ को मुड़ जाओ।" भेड़िया दूसरी तरफ़ मुड़ा; पर कोई फ़ायदा न हुआ। संदूक के छेदों में से खरगोश उस पर उबलता उबलता पानी डाल रहा था। भेड़िया थोड़ी देर छटपटाया; फिर मर गया।

इस तरह खरगोश का भेड़िये से हमेशा के लिए पिंड छूटा।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

सितम्बर १९५७ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिए। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ६, जुलाई '५७ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

जुलाई - प्रतियोगिता - फल

जुलाई के फ़ोटो के लिये निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो:
'किधर से आती रेल बता दो'

दूसरा फ़ोटो:
'हाथ के इशारे उसे दिखा दो!'

प्रेषक: श्री रामजी तिवारी, एस. के. विद्यालय, कलकत्ता - ७

मगर

सरीसृपों में मगर सबसे बड़े हैं। कई मगर बीस फ़ीट लम्बे भी होते हैं। दो प्रकार के मगर होते हैं। एक साधारण मगर और दूसरा घड़ियाल।

मगर साधारणतः पानी में ही रहते हैं। इनके पैर जलचरों के पैर-से होते हैं। परन्तु मगर तैरते समय पैरों का उपयोग नहीं करते। वे पूँछ का उपयोग करते हैं। उनके कानों पर चमड़े की परतें रहती हैं। जब मगर पानी में होता है, तो वे परतें पानी को कान के अन्दर नहीं जाने देतीं।

मगरों की आँख और नाक बाहर उभरे हुए होते हैं। इसलिए मगर केवल अपनी आँख और नाक पानी से ऊपर रखते हैं, बाकी शरीर पानी में डुबा देते हैं। इस तरह वे सतह के ऊपर सब देख सकते हैं, और अच्छी तरह साँस भी ले सकते हैं। ठण्डे प्रदेश में मगर नहीं जी सकते। वे गरम प्रदेशों में ही पाये जाते हैं। मगर में ठण्डा खून होता है। यानी उनके रक्त की उष्णता, वातावरण की गरमी और सरदी के साथ बदलती रहती है। इसलिए वे गरम पानी में ही जीवित रह सकते हैं।

एक प्रकार का मगर होता है, जो इस तरह चिल्ला सकता है कि मील भर उसका चिल्लाना सुनाई पड़े। सरीसृपों में मगर ही ऐसा है, जिसका बड़ा गला है।

मगर की पूँछ में बड़ा बल होता है। उसकी पूँछ की चोट से मनुष्य भी गिर जाता है। पानी में तो उसमें इतनी ताकत आ जाती है कि कहा नहीं

जा सकता। पर उसमें एक ही कमज़ोरी है, वह गले को एक तरफ़ नहीं मोड़ सकता। इसी कारण कई मनुष्य मगरों की चोट से बच जाते हैं।

मगर मांसाहारी होते हैं। उनके दाँत और जबड़े बहुत पक्के होते हैं।

मगर के अण्डे का ऊपरला भाग बहुत कड़ा होता है। परन्तु मगर के बच्चों के मुँह और नथने बड़े पैने होते हैं। इनकी सहायता से वे अण्डा तोड़ कर बाहर निकल आते हैं।

मगर एक ही समय में २० से अधिक अण्डे देते हैं। मगर का चमड़ा बहुत मज़बूत होता है। उससे बनाई गई चीज़ें बहुत टिकाऊ और सुन्दर होती हैं। चमड़े के लिए मगरों को पकड़ा जाता है। क्योंकि उसके चमड़े की इतनी कीमत है शायद यही कारण है कि कई प्रदेशों में मगर नाम मात्र रह गये हैं।

एक एक देश में मगर एक एक तरह के होते हैं। कई के मुख बड़े लम्बे होते हैं। पर कई पालतू मगरों के मुख बड़े छोटे होते हैं। संसार में २० तरह के मगर पाये जाते हैं।

अफ्रीका में अनेक हिंस्र जन्तु हैं। पर कहा जाता है कि वहाँ मगर ही मनुष्यों को अधिक खाता है। वहाँ मारे गये मगर के पेट में से, कहते हैं, सात सुअर की हड्डियाँ, पीतल के कड़े, एक काँच की माला, १४ हाथ की हड्डियाँ, पैर की हड्डियाँ, तीन रीढ़ की हड्डियाँ, १८ छोटे बड़े पत्थर एक रस्सी निकलीं।

Chandran

लोरियाँ
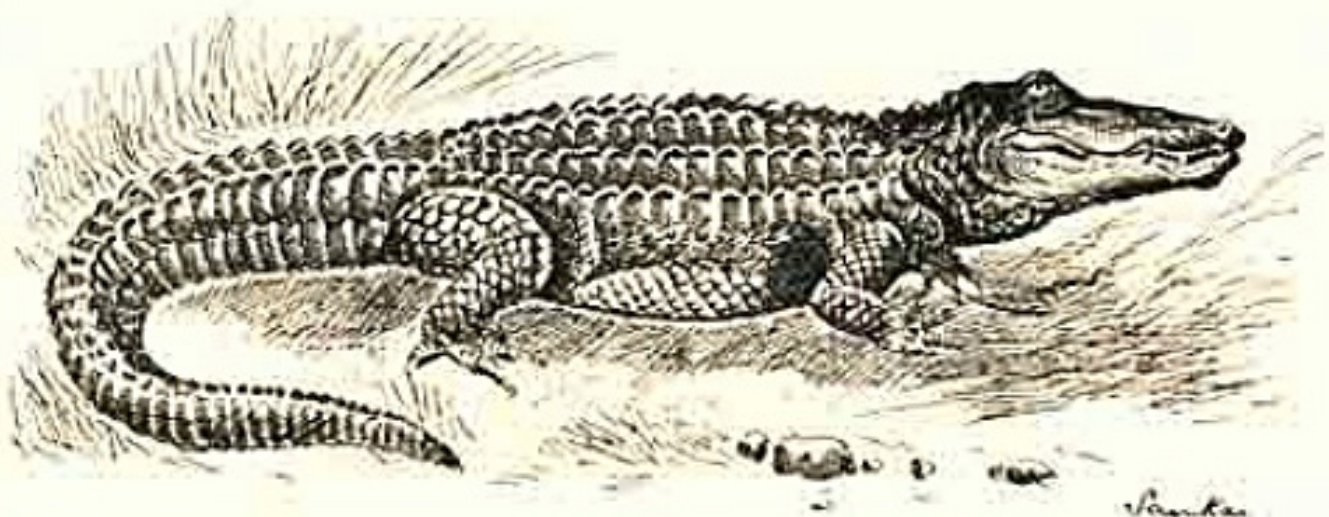
श्री 'शैलेश' मटियानी, बम्बई

चाँद झुलाए झूला तुझको, बाँध किरन की डोरी—
सो जा, सो जा, राज - किशोरी ! सो जा, सो जा, राज - किशोरी !!

आज रेशमी रश्मि - लड़ी में
गूंथ रही निशि मोती—
दुलरा जाती मृग-छौनों को
चंद्र-किरन की ज्योती !

तेरी बिखरी लट गूंथेगी
गगन-गाँव की गोरी !
सो जा, सो जा, राज-किशोरी !

सोए मीठी-मीठी निंदिया
अलि-कोकिल मधुवन में
तेरी नील-कमल-सी अँखियाँ
डूब रहीं अंसुवन में !

तेरी मैय्या, तुझे सुलावे
सुना प्यार की लोरी !
सो जा, सो जा, राज-किशोरी !

२

सो गई है हरित धरा,
सो गया है नील गगन—
तू भी सो जा मेरे ललन ;

सो जा, ललन, सो जा !

मधुवन की डार - डार
सो गई है कोकिला,
नयन भरें, अश्रु झरें,
मीत न मन का मिला !

नयन-द्वार आ गए हैं
पाहुने किसी के सपन !
तू भी सो जा, मेरे ललन ;

सो जा, ललन, सो जा !
सो जा, ललन, सो जा !

लाड़ का अपाढ़ है,
तू प्रीत का वसंत, रे !
मधुर आज, करुणा आज
लोरी के छंद, रे !

आज हूँ मैं समर्पिता,
लाल, तेरे ललित चरन !
तू भी सो जा, मेरे ललन ;
सो जा, ललन, सो जा !

समाचार वगैरह

भारत के राष्ट्रपति बाबू श्री राजेन्द्र प्रसाद जुलाई व अगस्त के महीनों में एक मास के लिए हैद्राबाद के राष्ट्रपति भवन में रहेंगे।

* * *

मद्रास और आन्ध्र के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री टी. प्रकाशम का स्वर्गवास ता. २० मई '५७ को हैद्राबाद में हो गया। मृत्यु के समय इनकी उम्र ८८ वर्ष की थी।

* * *

भारत सरकार ने १ जून १९५७ से नये १२ साला नेशनल प्लान सेविंग्स सर्टिफ़िकेट ज़ारी करने की निश्चय किया है। अब तक जो सात साला और बारह साला नेशनल सेविंग सर्टिफ़िकेट चल रहे थे, वे १ जून १९५७ से बन्द कर दिये गये।

* * *

केरल सरकार ने घोषणा की है कि गरीब छात्रों को मुफ़्त माध्यमिक शिक्षा दी जाएगी और प्राइवेट प्राथमिक शिक्षकों को अवकाश-पेंशन प्राप्त होगी।

* * *

नेब्रास्का (यू. एस. ए.) में पक्षियों के एक घोंसले में १३ ऐसे अंडों के

अवशेष प्राप्त हुए हैं, जिनकी आयु चार करोड़ वर्ष आंकी गई है। इतने पुराने अंडों के अवशेष अब तक नहीं मिले थे।

* * *

प्रधान मन्त्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने द्वितीय पंचवर्षीय योजना के लिए धन की आवश्यकता बतलाते हुए महिलाओं से यह कहा है कि वे अपने कुछ आभूषणों को सरकार को ऋण के रूप में दे दें तथा सोने के बाज़ार भाव के हिसाब से उनका जो मूल्य हो, उसका सरकारी कागज़ ले लें, जिस पर उन्हें व्याज मिलता रहेगा।

* * *

विश्व में भारत ही एक ऐसा देश है, जहां सब से अधिक चाय होती है और उसका निर्यात भी सब से अधिक होता है। सन् १९५६ में भारतीय चाय का उत्पादन ६६ करोड़ ३७ लाख पौंड था और उसका निर्यात था ५१ करोड़ ६० लाख पौंड। चाय के निर्यात से भारत को १ अरब ४० करोड़ रुपया कीमत में मिला।

* * *

सोवियत संघ में पचपन लाख से ऊपर बच्चे प्रति वर्ष पायोनियर-शिबिरों में, देहातों के बालोद्यानों और शिशु शालाओं में, स्वास्थ्य शालाओं और पर्यटक केन्द्रों में गर्मियाँ बिताते हैं।

* * *

गत मई मास में ब्रिटिश आधिपत्य के विरुद्ध भारतीय जनता के १८५७ के महान राष्ट्रीय विद्रोह का शताब्दि-महोत्सव सारे देश में बड़ी धूमधाम से मनाया गया। इस उपलक्ष्य में राज-धानी, दिल्ली में भी एक बड़े समारोह का आयोजन किया गया था।

चित्र - कथा

एक दिन दास और वास 'टाइगर' के साथ हवाई अड्डे पर गये। उन्होंने देखा, एक यात्री हवाई जहाज़ से उतरा। जल्दी में उसका एक चप्पल पैर से अलग हो गया था। तभी 'टाइगर' उसके यहाँ गया और चप्पल को मुँह में दबाये भागा। यात्री चिल्लाने लगा। जब हवाई अड्डे का अधिकारी बाहर आया तो 'टाइगर' ने वह चप्पल उसे दिया। उसमें सोना था। अधिकारी ने यात्री को कस्टम आफ़ीसर को सौंप दिया और 'टाइगर' की पीठ बड़े प्रेम से थपथपायी। दास और वास को भी बड़ी खुशी हुई।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press (Private) Ltd., and Published by him for Chandamama Publications, from Madras 26.—Controlling Editor: SRI 'CHAKRAPANI'

हम प्रत्येक व्यक्ति और व्यापारिक संस्थाओं को आश्वासन देना चाहते हैं कि कलात्मक सृजन, स्वच्छतम कार्य-निपुणता, आकर्षणीय छपाई और शीघ्र वितरण हमारा ध्येय है।
★
हिन्दी, अंग्रेजी, तेलुगु, तमिल, कन्नड़, मराठी, गुजराती, मलयालम और उड़िया में छपाई का कार्य लिया जाता है।
★
दी बी. एन. के. प्रेस
(प्राइवेट) लिमिटेड
चन्दामामा बिल्डिंग्स :: मद्रास-२६
टेलीफ़ोन : ८८४७४

ग्राहकों को एक जरूरी सूचना !

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिये। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न होगा, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। पता बदल जाने पर तुरन्त नए पते की सूचना देनी चाहिए। यदि प्रति न मिले तो १० वीं तारीख से पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद में आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

व्यवस्थापक, "चन्दामामा."

Photo by E. Ramalingam

पुरस्कृत परिचयोक्ति

'हाथ के इशारे उसे दिखा दो !'

प्रेषक : श्री रामजी तिवारी, कलकत्ता

CHANDAMAMA (Hindi) JULY 1957 Regd. No. M. 5452

भुवन - सुन्दरी